चन्दामामा
जनवरी १९९०
3
Rs

It's crammed with answers.
It's a challenge to do-it-yourself.
It's an invitation to contests.
It's an exciting pull-out in each issue.

PRICE
Rs.5/-

To subscribe write to,
JUNIOR QUEST,
Dolton Agencies, Chandamama Buildings,
N.S.K. Salai, Vadapalani,
Madras: 600 026.

A new monthly English children's magazine

A Chandamama Vijaya Combines publication

4 साहसी भारतवासी
गोआ में समुद्र के किनारे एक दिन...
आप चार साहसी भारतवासी वाली दीदी हैं न?
हाँ! पर...
हमारी मदद कीजिए!
धुन के पक्के चार यार– सुमित्रा है खूबसूरत, ज्ञानी है गुलबकावली, खोजी है नैन्सी और बहादुर है पवन, हरदम जोखिम उठाने और बुराई से निबटने को तैयार.

अरे, गहरा घाव है.
डॉक्टर के यहाँ ले चलो.

क्या हो गया?
सैलानी छोड़ गए टूटी हुई बोतल. उसी से चोट लगी.
और मेहरबानी करके आप अपनी ये बोतलें और गंदगी यहीं मत छोड़िएगा.

अरे! तुम वही हो 'समुद्र तट पर गंदगी न फैलायें' वाली...
मज़ाक की बात नहीं है जनाब! देखिए, कितना खतरनाक है यह.
बाद में, पुराने दुर्ग के रास्ते पर...
अद्भुत! है न!
...यह 'आवर लेडी ऑफ दी माउंट' की याद में बना है. अफोंसो दी अल्बुकर्क ने बनाया था 1510 में. पता है, पुर्तगाली हमारे देश में मुगलों से भी पहले आये थे.

Department of Tourism Government of India

HTA 6509 HIN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

वर्ण व धार्मिक विद्वेष

हमारे देश में लोकसभा के एक और चुनाव का कोलाहल समाप्त हुआ। इस बार के चुनाव की एक खास विशेषता - अठारह साल की उमर पूरी करनेवाले समस्त युवकयुवतियों का पहली बार अपने मतदान का उपयोग है।

विश्व के प्रजातन्त्रीय देशों में हमारा राष्ट्र सब से बड़ा है। पूर्वी देशों में हमारा देश ही एक ऐसा है, कि जिस में निरन्तर प्रजातन्त्र ही कायम है। हमारे देश से अलग होकर—हमारे साथ ही स्वतन्त्रता प्राप्त किया हुआ पाकिस्तान अनेक वर्षों तक सेना-शासित रहा है।

प्रजातन्त्र में कुछ खामियाँ भी हो सकती हैं, लेकिन अन्य प्रकार की व्यवस्थाओं की अपेक्षा इस में अधिक स्वेच्छा और स्वातन्त्र्य है। यही कारण है कि, इससे भिन्न राजनैतिक सिद्धान्तों का अनुसरण करनेवाले कुछ राष्ट्र इधर कुछ वर्षों से प्रजातन्त्र की ओर उन्मुख होते जा रहे हैं!

ईमानदारी और सजगता के साथ हम अन्य लोगों की उत्तमता को दृष्टि में रखकर ज़िम्मेदार नागरिको की भाँति अगर व्यवहार करें, तो प्रजातन्त्र के माध्यम से जीवन को सुसंपन्न बनाकर उत्तम फल पा सकते हैं। इसलिए हमें चाहिए कि हम अपने आप को ज़िम्मेदार आदर्श नागरिक बनाने की कोशिश करें।

वर्ष : ४२ | जनवरी १९९० | अंक : ५

एक प्रति : ३-०० :: वार्षिक चन्दा : ३६-००

आता बघूया तुमची हुशारी...

एकदा एक विनोदी नट बावळटासारखा हसरा चेहरा करून एका हॉटेलमध्ये गेला आणि तेथल्या मॅनेजरला, नोकरीला ठेवता का म्हणून विचारले.

मॅनेजर होता मुका. आणि विनोदी नट त्याला आवडत नसत.

त्याच्या पुढ्यातल्या टेबलवर हॉटेल (HOTEL) हा शब्द १५ कॅम्लिन पेन्सिलींची रचना करून ठेवलेला होता.

त्या नटाने नोकरी मागितली तेव्हा त्या मॅनेजरने उत्तर म्हणून त्या १५ पेन्सिलींपैकी फक्त ३ पेन्सिली हलवल्या आणि त्यांची फेररचना केली.

त्यावर त्या नटाला का म्हणून विचारायची गरजच पडली नाही. पुनः एकदा ओशाळे हसून लांब चेहरा करून तो आल्या पावली परतला.

आता सांगा पाहू त्या मॅनेजरने काय उत्तर दिले असेल?

(हाताशी १५ कॅम्लिन पेन्सिली नसल्या तर काड्यापेटींतल्या काड्या देखील तुम्ही वापरू शकता.)

कॅम्लिन फ्लोरा पेन्सिल

बुद्धिमान बालकांसाठी.
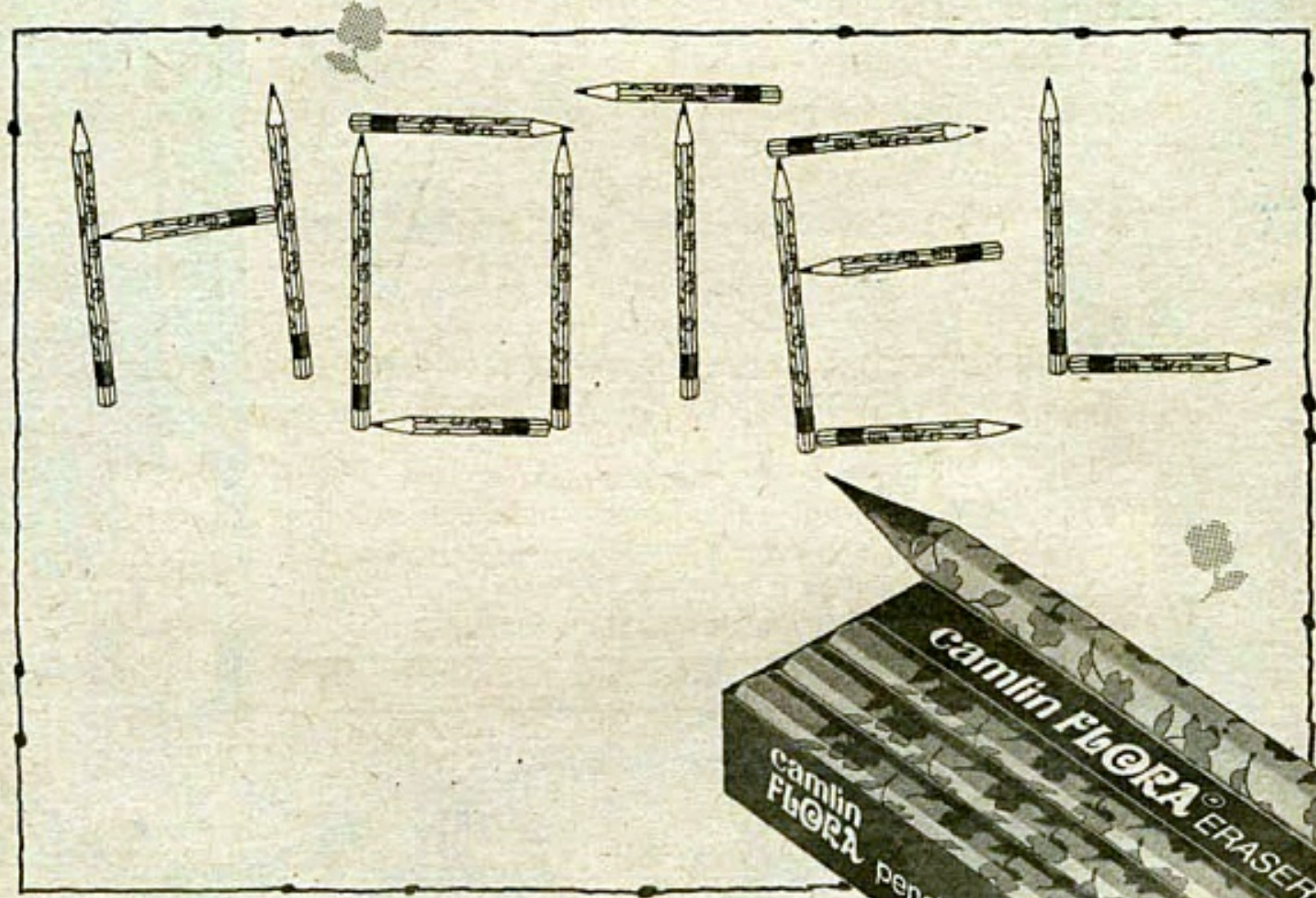
क्षमस्व!

दिसंबर १९८९ की संख्या में पृष्ठ ९ और १० पर पंक्तियों की रचना में ग़लती हो गई थी। पृष्ठ १० की प्रथम ९ पंक्तियों के बाद पृष्ठ ९ की पूरी ९ पंक्तियाँ पढ़ी जाएँ। और फिर पृष्ठ १० की शेष पंक्तियाँ।

पाठकों की असुविधा के लिए हम क्षमा चाहते हैं।

तरह लगाया गया था। अपनी शैशवावस्था में ही उन्हों ने अपनी अपूर्व परिपक्वता का परिचय दिया था। उस समय पहले कभी भी न देखे हुए उन लोगों के नाम ले लेकर उसने वार्तालाप किया था।

अर्थात्, उनके जीवन की इस घटना का उनके शान्ति-पुरस्कार प्राप्त करने से कोई सम्बन्ध नहीं है।

दलाई लामा को शान्ति-पुरस्कार

दलाई लामा का जन्म तिब्बत में पहाड़ों के बीच कोने में स्थित एक गाँव में हुआ था। फिर भी वह वहाँ की जनता के आध्यात्मिक राजनीति का नेता बना। वही 'हिज होलिनेस तेनजिन गियात्सो' नाम से विख्यात चौदहवाँ दलाई लामा है।

तिब्बत बहुत ही विचित्र देश है। हिमालय पर्वतों की उत्तरी दिशा में ४७०, ००० मील तक फैले इस देश की आबादी पन्द्रह लाख है। वहाँ के सभी लोग बौद्ध धर्मीय हैं।

वहाँ की जनता का विश्वास है कि किसी भी दलाई लामा की मृत्यु के समय उसकी आत्मा, उसी समय जन्म लेनेवाले एक शिशु के भीतर प्रवेश करती है। दलाई लामा की आत्मा जिस शिशु के अन्दर प्रवेश कर गयी हो, उस शिशु का पता करने के लिये उन लक्षणों को पहचानने वाले लाया लोग सैंकडों गाँवों में महीनों या आवश्यकता होने पर वर्षों तक पर्यटन करते रहते हैं। आज के दलाई लामा का पता भी इसी

हालही में तिब्बत को अनेक कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है। अठारहवीं शताब्दि में चीन के मंचू राजाओं ने तिब्बत को अपने कब्ज़े में कर लिया। लेकिन मंचू वंश के अन्त होने के बाद तिब्बत की जनता ने चीन के सैनिकों को भगाकर स्वतन्त्र देश की घोषणा की। फिर भी १९५० में उत्तरी तिब्बत पर चीन ने अधिकार कर लिया। १९५९ में तिब्बत की जनता ने चीन के विरुद्ध विद्रोह किया, लेकिन चीन ने विद्रोहियों को निर्दयतापूर्वक दबाया। तिब्बत की राजधानी ल्हासा में स्थित दलाईलामा के भवन का अधिकांश भाग ध्वस्त किया गया। इसपर, दलाई लामा बहुत सी मुसीबतें झेल कर भारत में आ पहुँचे। उनके पीछे हज़ारों तिब्बतवासी भी भारत में प्रवासी बनकर आये। वे सब पूरे अनुशासन के साथ और आदरपूर्वक अपना समय दलाई लामा के नेतृत्व में बिता रहे हैं। दलाई लामा ने अपने देश की जनता की कठिनाइयों का बड़ी सहनशीलता के साथ

पूरे विश्व को परिचय कराया । इस मामले में उन्हों ने संयम का परिचय दिया । अपनी प्रजा की दीनावस्था पर वे बहुत ही व्याकुल हुए, मगर बौद्ध-मतावलम्बी मानकर, दृढ़ निश्चय से शान्ति मार्ग से अपनी आशाओं को साधने के लिये कार्यरत हैं । विश्व ने उनको एक शान्तिदूत के रूप में पहचाना । यही कारण है, कि उनको नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ है ।

मार्च, १९८५ में 'दि हेरिटेज' के साथ जो एक विशेष साक्षात्कार किया, उस संदर्भ में उन्हों ने कहा था, "धर्म का तात्पर्य केवल विषय का सम्यक् ज्ञान मात्र नहीं, उसको आचरण में लाना आवश्यक है । जिस प्रकार आहार हमारी भूख को मिटाता है, उसी प्रकार धर्म हमारी अंतरंग क्षुधा को दूर करे, यह आवश्यक है । केवल पात्र में ढँककर सुरक्षित रखने से आहार का कोई प्रयोजन नहीं है, उसे खाना है, हज़म करना है, और नयी शक्ति पैदा करनी है । इसी प्रकार धर्म की उत्तमता को बिना समझे और बिना उसको अपने जीवन में आचरण में लाये कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा । अपने धर्म के सत्य के दर्शन करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति अन्य धर्मों की विशेषताओं को भी ज़रूर पहचान लेगा । इस विश्व में विभिन्न मानसिक स्तर वाले, विभिन्न प्रकार के लोग निवास करते हैं । उन सब को एक ही धर्म संतुष्ट नहीं कर सकता । इसीलिये तो विभिन्न प्रकार के धार्मिक विश्वास और तात्त्विक सिद्धान्त पैदा हुए हैं । अतः उन सब के प्रति आदर-भाव रखना नितान्त आवश्यक है ।"

जैसी मेहनत वैसा फल

गोवर्धनपुर का ज़मीन्दार भूपति अचानक एक भयंकर बीमारी का शिकार हो गया। घन-वैद्यों ने दिन-रात श्रम उठाकर उसको पुनः स्वस्थ बनाया। पर उन्होंने यह भी सलाह दी, कि जलवायु के परिवर्तन से वह पूर्णतः स्वस्थ हो सकता है। और इसके लिये अनुकूल गाँव श्रीपुर बताया।

श्रीपुर गोवर्धनपुर से काफी दूर था। उस गाँव में भूपति की एक दूर की रिश्तेदार औरत थी। वह अपनी बेटी के साथ ग़रीबी में दिन काटती थी। भूपति को एक महीने तक सब प्रकार की सुख-सुविधाओं को त्याग कर एक साधारण व्यक्ति की हैसियत से दिन काटना ज़रूरी था। याने उस को प्रतिदिन पैदल चलना था, दावत में परोसे जानेवाले स्वादिष्ट और मसालेवाला भोजन नहीं करना था, फर्श पर सोना था, उसके अपने परिवारवालों को याने अपने बीबी बच्चों को छोड़कर रहना ज़रूरी था; इसीलिये वैद्यों ने उसे अकेले ही श्रीपुर जाने की सलाह दी।

श्रीपुर में समय पर वर्षा न पड़ने के कारण अकाल पड़ा था। साग-सब्जी भी ठीक तरह पैदा नहीं हो पाती थी वहाँ!

भूपति को स्वादिष्ट, मसोलदार भोजन करने की आदत थी। वह यह सोचकर डर गया कि उसे अपनी पसन्द का भोजन नहीं मिल सकेगा, इसलिये छोटे मर्तबानों में रखकर वह तरह-तरह के अचार व चटनियाँ साथ ले गया।

उस ग़रीब रिश्तेदारिन को पहले पता न चला, कि भूपति उसके घर क्यों आया है और उसे यह भी पता न था, कि वह कितने दिन अपने घर रहेगा। उसने इतना तो सुन रखा था, कि भूपति एक बहुत ही बड़ा ज़मीनदार है, इसलिये पहले दिन उसने कहीं से थोड़ी

बहुत सब्जी व तरकारी लाकर अच्छा सा भोजन बनाकर उसे खिलाया । न मालूम, अस्वस्थ होने के कारण या किसी और कारण से भूपति को उस रिश्तेदारिन की बनी रसोई बड़ी स्वादिष्ट लगी ।

भूपति ने उस औरत की खूब तारीफ़ की, और उसे अपनी बीमारी का समाचार सुनाकर कहा, "मैं यह सोचकर, निकलने से पहले डर रहा था कि एक महीने का समय मैं यहाँ कैसे बिता सकूँगा । मगर तुम्हारी रसोई तो अद्‌भुत है!"

भूपति की बातें सुन कर ग़रीबन का दिल धड़क उठा । वह जानती थी कि ज़मीनदार को महीना भर खाना खिलाने पर उसका मूल्य तो किसी रूप में मिल जाएगा । पर ज़मीनदार भले ही खाने का खर्च उठा लें, इतना सारा परिश्रम वह कैसे कर सकेगी? इस लिए उसने बेटी उमा से कहा—"बेटा, तुम मेरी कुछ मदद कर सकोगी?"

बेटी ने साफ़ कह दिया—"माँ, इतनी मेहनत उठाकर हम रसोई नहीं बना सकेंगी । एकाध दिन की बात और है, पूरे महीने भर मेहनत करना मुश्किल है । हम रोज़ाना जो खाना बनाते हैं वही बनाकर ज़मीनदार को परोसेंगे । वे अपने साथ जो अचार और चटनियाँ लाये हैं, उनसे खाने को स्वादिष्ट बना लेंगे ।"

माँ ने बेटी की बात मान ली । दूसरे दिन उसने सादा भोजन बनाया और परोसते समय ज़मीनदार से कहा—"बाबूजी, मैं कल यह बात भूल गई कि आप अस्वस्थ हैं, इस लिए मैंने वैसे खाना बनाया । आज से मैं आपको वे ही चीज़ें परोसूँगी जो आप अपने साथ लाये हैं । वे ही चीज़ें आपके स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होंगी ।

भूपति ने उस औरत की बातों पर अपनी नाराज़गी प्रकट करते हुए कहा—"मेरे स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए केवल जलवायु का परिवर्तन ही काफी नहीं है । भोजन में भी कुछ परिवर्तन होना ज़रूरी है । पहले मैं जो अचार व चटनियाँ खाया करता था, उनका सेवन मेरे लिए वर्ज्य है ।"

औरत ने ज़मींदार की बातों की ओर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया ।

हर रोज़ गाँव में घूमते-फिरते समय भूपति

के साथ बेटी उमा भी जाती थी। वे दोनों अनेक विषयों पर बातचीत किया करते। उमा की बुद्धिमानी पर ज़मींदार खुश हो गया। एक बार उसने कहा–"देखो बेटा, तुम्हारे लिए अच्छा वर ढूँढ़कर मैं तुम्हारा विवाह रचाऊँगा। चिंता न करो, सारा खर्च मैं ही करूँगा।"

उमा ने यह बात अपनी माँ के कानों पर डाली। माँ ने खुशी खुशी कहा–"वाह, भूपतिजी तो बड़े अच्छे आदमी हैं। हमारे गाँव में उनका आना हमारे लिए बड़े सौभाग्य की बात है।"

यों दो हफ़्ते बीत गये। एक दिन भूपति ने उमा से कहा–"बेटी उमा, मैं अपने साथ जो अचार और चटनियाँ लाया हूँ, उनको तो हम घर में रोज़ ही खाते हैं। यहाँ भी उन्हीं चीज़ों को खाना मुझे नागवार हो रहा है। आज कल मुझे उन में बिलकुल स्वाद नहीं लगता। मेरी बात मानो और तुम अपनी माँ से कह दो कि मुझे वही भोजन दिया जाए जो तुम लोग अपने लिए बनाते हो।"

उमा ने ज़मीनदार को समझाया–"बाबूजी, माँ जो कुछ भी करती है, आपकी भलाई के लिए ही न! आप खुद महसूस करते होंगे कि यहाँ आने के बाद आप के स्वास्थ्य में कितना सुधार हो गया है!"

गाँव के सभी लोगों को शीघ्र ही मालूम हो गया कि उस गरीब औरत के घर में रहनेवाला भूपति एक बहुत बड़ा ज़मीनदार है। लोग उससे मिलने के लिए आने लगे। उनमें से कुछ लोगों को ज़मींदार ने भोजन के लिए निमंत्रण दिया। गरीब औरत कोई विशेष
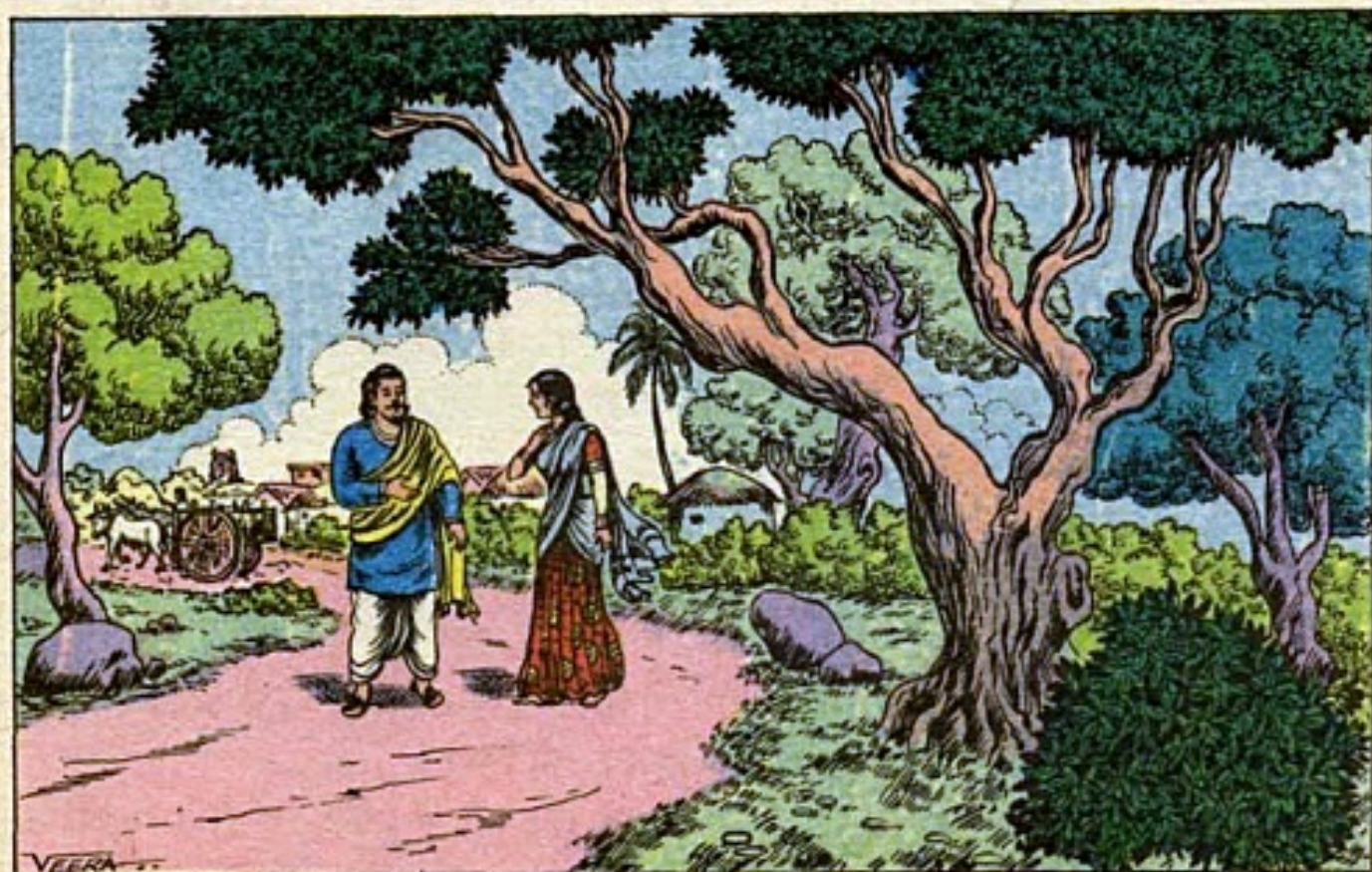
व्यंजन तो नहीं बना पायी। भूपति अपने साथ जो चीज़े लाया था, उन्हीं को सब को खिलाया गया।

भोजन के बाद दावत में आए लोगों में से चार व्यक्ति उस औरत से मिले और उन्होंने कहा—"आज तुमने खाने में जो चीज़ें दीं वे सचमुच बहुत बढ़िया थीं। हम उनके स्वाद को भूलने पर भी भुला नहीं पाएँगे। हम तुम्हें मुँहमाँगा धन देंगे, हमारे लिए ऐसे व्यंजन बना दो न!"

गरीब औरत ने उन्हें समझाया—"ये व्यंजन तो ज़मींदार साहब ख़ुद अपने साथ लाये थे। इनको बनाना मैं नहीं जानती।"

श्रीपुर में आकर भूपति का स्वास्थ्य खासा सुधर गया। फिर भी वह और दो हफ़्ते वहीं रहा। उसको ले जाने के लिए एक दिन गाड़ी आई। जब ज़मींदार का सामान गाड़ी में रखा जा रहा था, तब ग़रीब औरत बचे हुए अचार व चटनियों के मर्तबान भी गाड़ी में रखने को हुई, तब ज़मींदार ने उसे रोकते हुए कहा—"अब मुझे इनकी क्या ज़रूरत है"

भूपति के चले जाने के बाद माँ-बेटी ने मर्तबानों के ढक्कन खोल कर देखा, लगभग सभी अचार व चटनियाँ समाप्त हो गईं थीं।

निराश हो ग़रीब औरत ने कहा—"कितना अच्छा होता, अगर यह बात पहले मालूम होती कि ज़मीनदार ये चीज़ें यहीं छोड़ जाएँगे! एक तो ये चीज़ें खानेके लिए बड़ी स्वादिष्ट हैं, और दूसरे इन्हें बेच कर कुछ पैसे भी मिल जाते! इस लिए ये चीजें अपने लिए रखकर हमारा सस्ता भोजन ज़मीनदार को खिला देतीं!"

उमा ने गहरी साँस लेकर कहा—"माँ, कहते हैं न? जैसी मेहनत वैसा फल! अब चिंता करने से फ़ायदा ही क्या?"

पर ज़मीनदार भूपति माँ-बेटी को भूला नहीं। श्रीपुर में रहते उसने कहा था कि उमा की शादी का प्रबंध वह करेगा। एक महीने के अन्दर ज़मीनदार ने अपने नौकर के हाथ कीमती वस्त्र भेजकर संदेश दिया कि दूसरे ही दिन उमा की सगाई होगी। इस लिए उसे अच्छी तरह सजाकर रखा जाए।

दक्षता

सौपर्ण नामक एक मुनि अपने शिष्य को साथ लेकर मलयावती नगर के लिये निकल पड़ा । रास्ते में एक जंगल था । जंगल में चलते हुए वह ऐसे स्थान पर आया जहाँ दो रास्ते फूटते थे । मुनि व शिष्य दोनों को भी मालूम नहीं था कि उनमें से कौन रास्ता उन्हें मलयावती पहुँचा देगा । वे इसपर विचार कर ही रहे थे, कि कुछ दूरी पर एक बरगद के नीचे बैठकर पाँसे खेलते हुए दो युवक उन्हें दिखाई दिये । गुरु-शिष्य दोनों ने उन के पास पहुँचकर ज़रा दूर बैठकर थोड़ा-सा विश्राम किया ।

पाँसे खेलनेवाले युवकों ने गुरु-शिष्य दोनों को देखकर भी उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया ।

विश्राम करने के बाद सौपर्ण जब वहाँ से जाने को हुआ, तब उसने उन युवकों से मलयावती जाने का रास्ता पूछा ।

दोनों युवकों ने सौपर्ण व उसके शिष्य पर विचित्र सा दृष्टिपात किया और फिर वे अपने खेल में व्यस्त हो गये ।

सौपर्ण फिर एक बार रास्ता पूछने ही वाला था, कि उन में से एक युवक ने उससे कहा, "महाराज, आप दायीं ओर के रास्ते पर चलते रहिये तो मलयावती पहुँच जायेंगे ।"

इतने में दूसरे युवक ने पहले को रोकते हुए कहा, "सुनिये स्वामीजी, इसका कहना सही नहीं है । आप बायें रास्ते से ही मलयावती पहुँच सकते हैं ।"

सौपर्ण को उनका यह व्यवहार कुछ विचित्र सा ही लगा । दोनों युवकों ने दो अलग रास्ते सुझाये थे, इसलिये उनकी समस्या वैसे की वैसे बनी रही थी । आखिर कौन रास्ते जाया जाये?

ज़रा सोचकर सौपर्ण ने फिर पूछा, "यह बताओ, मलयावती नगर का राजा कौन है?"

उनमें से पहले ने झट जवाब दिया, "मलयावती का राजा विष्णुगुप्त है ।"

मृणालिनी गुप्ता

पर दूसरे युवक ने कहा, "मलयावती के राजा का नाम है सर्वोत्तम ।"

इस प्रकार राजा के अलग अलग नाम बताकर वे दोनों फिर अपने खेल में मशगुल हो गये ।

इसके बाद सौपर्ण ने उनसे कोई और सवाल नहीं किया । अपने शिष्य के साथ बायीं ओर का रास्ता पकड़कर वह चल पड़ा । चार-पाँच कोस फासला तय करने के बाद उन्हें मृणालिनी नदी के तट पर शक्ति का मन्दिर और नदी के उस पार मलयावती नगर की सीमा दिखाई दी ।

गुरु-शिष्यों ने नदी में स्नान किया; मन्दिर में जाकर आदि शक्ति के दर्शन किये और फिर एक घने वृक्ष की छाया में बैठ गये ।

शिष्य के मन में बराबर यह संदेह कुरेद रहा था, कि गुरु ने इसी रास्ते का पता कैसे लगाया । अब उसने अपना यह सन्देह गुरु के सामने प्रकट किया ।

सौपर्ण ने मुस्कुराकर कहा, "प्रारंभ में जब उन युवकों ने दो भिन्न रास्ते बताये, तब मैं ने ताड़ लिया, कि उनमें से एक झूठ बोल रहा है, और दूसरा निःसंशय सच । इसलिये मैंने उनसे ऐसा प्रश्न पूछा, कि जिसका उत्तर मैं जानता था । प्रथम युवक ने मलयावती के राजा का नाम 'विष्णुगुप्त' कहा तो दूसरे ने 'सर्वोत्तम' बताया । हम तो जानते ही हैं, कि राजा का नाम 'सर्वोत्तम' ही है । उन्हीं का निमन्त्रण पाकर ही तो हम मलयावती जा रहे हैं न? इस आधारपर मुझे पता लग गया कि दूसरा युवक ही सत्य बता रहा है । अतः उसी के बताये मार्ग का अनुसरण कर हम यहाँ पहुँच गये हैं ।

नगर में पहुँचने के बाद सौपर्ण ने शिष्य को समझाया, "समाज में अनेक प्रकार की मानसिक दशा रखनेवाले लोग होते हैं । अनेक दिलों को किसी भी प्रकार से पीड़ा पहुँचाये बगैर उनके द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेना बुद्धिमानी का काम होता है । पर इसके लिये अत्यन्त दक्षता की आवश्यकता होती ।

(४)

(सुमेध राज्य के सेनापति वीरसिंह ने राजपरिवार का निर्मूलन करने का षड्यन्त्र रचा । राजा शान्तिदेव ने रानी तथा अपने दो वर्षीय राजकुमार को गुप्त सुरंग मार्ग से भेज दिया और खुद शत्रु के साथ वीरता पूर्वक युद्ध करके वह नदी में कूद पड़ा । सुरंग-मार्ग से जंगल में प्रवेश कर रानी ने राजकुमार को मुनि जयानन्द के हाथ सौंप दिया और सदा के लिये अपनी आँखें मूँद लीं । आगे पढ़िये—)

मुनि जयानन्द मौन होकर रानी की मृत देह के सामने बैठ गया । उसी समय एक बन्दर बरगद की शाखा पर आकर बैठा और कीच कीच आवाज़ करने लगा । मानो कह रहा था ।—"स्वामीजी, मैं आ गया हूँ । कुछ मदद कर सकता हूँ आपकी? कभी तो सेवा का अवसर दीजिएगा?"

मुनि ने अपना सिर उठाकर ऊपर देखा और वह बोला, "आओ, मारुती! नीचे उतर आओ । तुम्हारे लिये एक नया दोस्त आया है । इसके साथ खेलो । आज सेवा का अच्छा मौका है तुम्हारे लिए । तुम्हें बहुत कुछ करना है ।"

एक ही छलाँग में बन्दर नीचे आया और मुनि की बगल में बैठ गया ।

"मारुती, तुम अभी जाकर तुरन्त भल्लूकिनी को साथ ले आओ । तुम्हारे मित्र को उसके हाथ सौंप देना है । आज इसको

किसी की सहायता की नितान्त आवश्यकता है । गरज़ के समय जो काम आता है वही सच्चा मित्र! यह कौन है इसका बहुत ख्याल अभी न करना ।" मुनि ने मुस्कुराते हुए कहा ।

बन्दर उठ खड़ा हुआ और बड़ी खुशीसे इस वृक्ष से उस वृक्ष पर कूदता हुआ वहाँ से चला गया । एक नया दोस्त मिलने की उसको खुशी थी ।

अपनी माँ की मृत्यु के बारे में बालक युवराज को कुछ भी पता न था । मन्दहास करता हुआ वह कभी अपनी माँ के चेहरे की ओर तो कभी मुनि के चेहरे की ओर देख रहा था ।
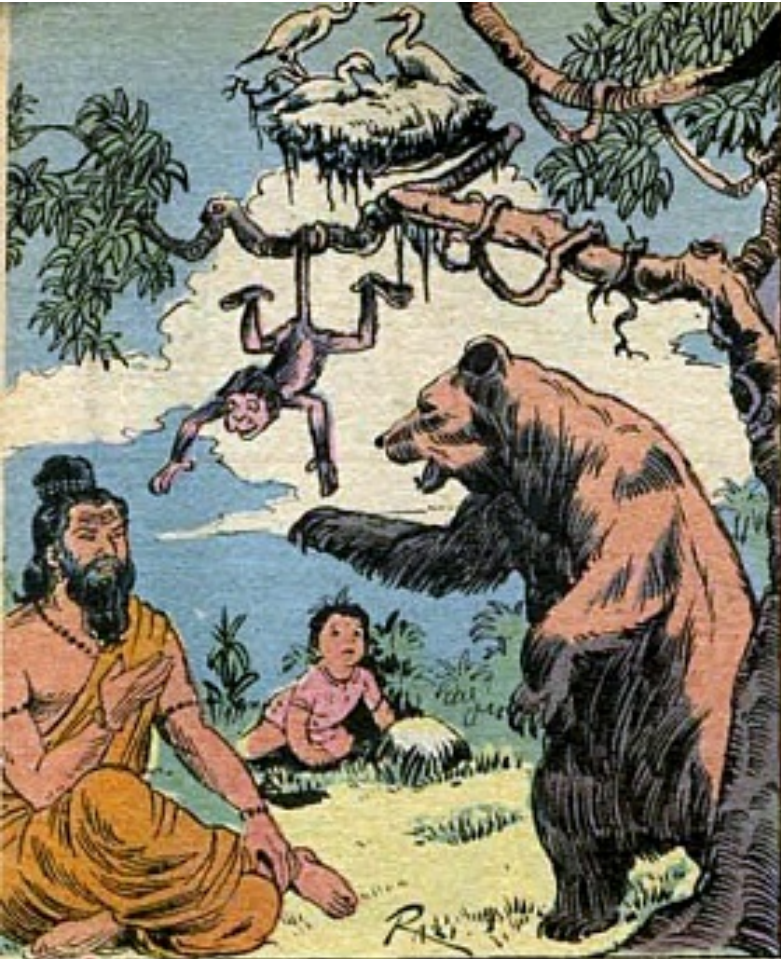
मुनि ने उसे उद्देश्य कर कहा, "तुम बड़े साहसी हो । भविष्य में तुम्हें बहुत कुछ साधना होगा । अपनी माँ के बिना पलकर बड़े हो, उनकी मृत्यु का कारण बने हुए दुष्टों को उचित दण्ड देना होगा ।"

युवराज को भला मुनि की इन बातों पर ध्यान देने की समझ ही कहाँ? वह हँसता हुआ मुनि की दाढ़ी से खेलने लगा । मुनि ने उस शिशु को अपने हाथों उठा कर कहा, "मैं तुम्हारा यह कण्ठहार उतार ले रहा हूँ । परिचय हो सकता है । इस समय यह बात तुम्हारे लिये हितकर नहीं है ।" मुनि ने शिशु का कण्ठहार उतार लिया । छोटे युवराज का अपनी दाढ़ी के साथ खेलना मुनि को बहुत अच्छा लगा । उसके लिए यह अभूतपूर्व अनुभूति थी ।

इस बीच मारुती उत्साहपूर्वक कोलाहल करता हुआ वहाँ आ धमका । अपनी पूँछ पेड़ की ड़ाल से लपेट कर वह औंधे मुँह लटकने लगा और युवराज को हँसाने का प्रयत्न करने लगा । मारुती के साथ एक भल्लूकिनी भी वहाँ आ पहुँची । शिशु की ओर देख कर वह भी फूला न समाई । इधर-उधर से शिशु को देख कर नाच उठी । उसके मन में हुआ—अगर यह बालक अपने को मिल जाए तो क्या ही मज़ा आएगा! खूब खेलूँगी ।

मुनि ने भल्लूकिनी से कहा, "भवानी, इस शिशु की सावधानी से रक्षा करने की ज़िम्मेदारी मैं तुमपर सौंप रहा हूँ । मुझे आशा है, तुम्हारे लिए काम बड़ा ही रोचक होगा । यह शिशु तुम्हारा खूब मनोरंजन

करेगा । इसे प्यार से सँभालो ।" और उसने युवराज की ओर संकेत किया ।

भल्लूकिनी ने युवराज की ओर अपने हाथ फैलाये । पर युवराज उसके समीप जाने से डरने लगा । यह भाँपकर मुनि राजकुमार से बोले, "बेटे, यह भवानी बड़ी अच्छी है । वह माँ बनकर तुम्हारी रक्षा करेगी । तुम जो भी चाहोगे, वह ला देगी । वह हररोज़ नहाती है और एकदम साफ़ रहती है । तुम निडरता से उसके पास जाओ ।"

भल्लूकिनी ने भी उसे अपने पास बुलाते हुए सिर हिलाया । मुनि के शब्दों का कोई अर्थ समझे बिना ही उनका संकेत और भल्लूकिनी की आँखों में प्यार देखकर युवराज धीरे धीरे कदम बढ़ाता हुआ उसकी ओर चल पड़ा ।

मुनि भालू को ही नहीं, बल्कि किसी भी जानवर को पालतू बना सकता था । खूँख्वार बाघ तथा सिंहों को भी कुछ ही क्षणों में वह अपने अधीन कर सकता था । यही नहीं, जंगल के सभी जानवरों को भी वह अपनी अपूर्व शक्ति के बल पर अपने वश में रखने की सामर्थ्य रखता था । लेकिन सब लोग यह नहीं जानते थे; जान-बूझ कर उसने यह बात गुप्त रखी थी ।

मुनि के साथ उसके आश्रम में शेखर तथा गोविन्द नाम के दो शिष्य रहते थे । योगाभ्यास तथा ध्यान की पद्धतियाँ सीखते हुए वे अपने गुरु की सेवा में समय बिताते थे । वास्तव में मुनि के लिये मानवों से किसी भी प्रकार की सहायता की आवश्यकता नहीं थी, क्यों कि उसके प्रत्येक आदेश का पालन

करने के लिये जंगल के जानवर हमेशा उसकी सेवा में हाज़िर रहते थे । फिर भी शिष्यों का विद्या-प्रेम देख कर मुनि ने उनको अपने पास रख लिया था । दोनों शिष्यों को गुरु से बड़ा प्रेम था ।

उस समय दोनों शिष्य युवराज के जन्मदिन का उत्सव देखने राजधानी गये हुए थे ।

बड़े ही प्यार से अपने हाथ फैलाने वाली भल्लूकिनी का वात्सल्य देख युवराज मुग्ध होकर हँसता हुआ उसके पास गया; तब उसने तत्काल शिशु को अपनी बगल में उठाया और वहाँ से चल पड़ी । आनन्द से नाचता हुआ मारुती भी उसके पीछे निकल पड़ा ।

प्रसन्नतापूर्वक उस दृश्य को देखता हुआ मुनि थोड़ी देर अविचल वहीं खड़ा रहा । जब वे उसकी आँखों से ओझल हो गये, तब उसकी दृष्टि रानी के शव पर केन्द्रित हुई । इस से पुन: वह चिन्ता में डूब गया ।

सूर्योदय के साथ चारों ओर धीरे धीरे प्रकाश छाने लगा । पक्षियों के कलरव से सारा वन-प्रदेश गूँजने लगा ।

इतने में मुनि के दोनों शिष्य बड़ी आतुरता के साथ अपने गुरु के पास पहुँचे ।

मुनि ने उनकी ओर इस तरह देखा, मानों वे उनसे पूछ रहे हो– ''आख़िर समाचार क्या है?''

''गुरुदेव, हम अत्यन्त दु:खद समाचार ले आये हैं । राजपरिवार विपदा में फँस गया है । सर्वत्र यह ख़बर फैल गयी है कि राजा की मृत्यु हो गयी है ।'' शेखर ने कहा ।

''रानी का भी पता कोई नहीं जानते । न मालूम उन पर क्या बीती है!'' गोविन्द ने कहा ।

गहरी साँस लेकर मुनि ने दूसरी ओर अपना मुहँ मोड़ लिया । शिष्यों ने उस ओर दृष्टि दौड़ायी और वे चकित होकर पीछे हट गये । थोड़ी ही देर में सँभलकर रानी के पास पहुँचकर उन्होंने पूछा, ''क्या महारानी का देहान्त हो गया है?''

''हाँ! शत्रुओं की तलवार से तो इस ने अपने प्राण बचाये, लेकिन अपने प्राणों के प्राण महाराज अचानक बिछुड़ने के आघात को वह सहन नहीं कर सकी । यहाँ पहुँच कर अपने पुत्र को इस ने हमें सौंप दिया और

"महारानी ने हमारे प्रति जो विश्वास दिखाया है, उसे व्यर्थ नहीं होने देना चाहिये । उसके पुत्र को बड़ी सावधानी से पाल कर बड़ा करना, हम सब की ज़िम्मेदारी है ।" मुनि ने कहा ।

"हम आप के हर आदेश का पालन करेंगे गुरुदेव!" दोनों ने एक स्वर में कहा ।

"इस समय हमें महारानी के पार्थिव शरीर के बारे में सोचना चाहिये । महाराज कहाँ है, इस बारे में हम कुछ भी नहीं जानते । शत्रु की सामर्थ्य के बारे में भी हमें कुछ मालूम नहीं है । चाहे जो हो, महारानी की मृत्यु का समाचार गुप्त रखना सर्वथा उचित होगा ।" मुनि ने कहा ।

अपनी आँखें सदा के लिये मूँद लीं । अभी थोड़ी देर पहले ही भल्लूकिनी युवराज को अपने साथ ले गयी है ।" मुनि ने सारा समाचार शिष्यों को सुनाया ।

गहरा निःश्वास छोड़कर शेखर ने कहा, "मैंने महारानी के विवाह-दिन के महोत्सव में उन्हें पहले पहल देखा था । इन तीन-चार महीनों में उनके चेहरे में कोई परिवर्तन नहीं आया है । वही चेहरा मैं अब भी देख रहा हूँ ।"

"सारी प्रजा कहा करती है, कि महाराज की भाँती, महारानी भी अपनी प्रजा के प्रति बहुत ही दयालु है । हे भगवान! ऐसे पुण्यात्माओं की यह क्या दुर्गति हो गयी!" गोविन्द ने अपना दुख दर्शाया ।

"मगर मृत्यु का समाचार मालूम होने पर भी शत्रु अब क्या कर सकता है? दरअसल, वे अब जीवित नहीं है न?" शेखर ने पूछा ।

"यह बात सही है, कि वे अब महारानी को कोई हानि नहीं पहुँचा सकते; मगर जब शत्रु को यह विदित होगा कि महारानी का देहान्त इस प्रदेश में हुआ है, तब वे युवराज की खोज में यहीं आयेंगे न? युवराज को हानि पहुँच सकती है न?" मुनि ने शंका प्रदर्शित करते हुए पूछा ।

"आप सच कह रहे हैं गुरुदेव! मगर अब यह कहिये कि महारानी के शरीर को दहन करना है या दफ़नाना है?" शिष्यों ने मुनि से पूछा ।

"यह कार्य महारानी की इच्छा के अनुसार संपन्न करना है । इसलिये उनके अभीष्ट को

जानना होगा ।" यह कहकर मुनि चुपचाप समीप के झरने में स्नान करके लौटा और महारानी की मृत देह के समीप ध्यानमग्न बैठ गया । थोड़ी देर बाद आँखें खोल कर उसने कहा, "महारानी की आत्मा उनकी देह को गाड़ने की कामना करती है । साथ ही वे चाहती हैं, कि उनको गाड़ने से पहले उनके शरीरपर युवराज के हाथों फूल रखवाया जाय । प्राण निकलने के बाद तत्काल अन्तिम संस्कार करना शुभदायक नहीं होता; क्यों कि भौतिक काया के चारों तरफ थोड़ी देर के लिये एक प्रकार का अदृश्य प्रकाश रहता है । उसके अन्तर्धान होने तक शरीर को वैसे ही रखना होगा । इसलिये सूर्यास्त तक इस शरीर को यहीं रखना होगा । तुम दोनों यहीं रह जाओ ।" मुनि ने उन्हें आदेश दिया ।

"लेकिन गुरुदेव, यदि कोई लकड़हारा इस प्रदेश में आ जाए तो यह रहस्य प्रकट हो जाने का डर तो है ही ।" शिष्यों ने मुनि से पूछा ।

"यह समस्या भी सही है । वे भले ही अच्छे लोग क्यों न हों, हमें इस विषय में पूरी सावधानी बरतनी चाहिये ।" यह कहकर मुनि ने अपने नेत्र मूँद लिये और किसी मन्त्र का जाप किया । दूसरे ही क्षण कुछ दूरी पर बाघों की दहाड़ें सुनायी दीं । थोडी देर में वे ध्वनियाँ समीप आयीं और एक भयंकर बाघ, बाघिन और उनके तीन शावक वहाँ पहुँचे । बाघ दम्पति ने मुनि के चरणों पर अपने माथे टेक दिये । तीनों शावक भी खुशी से उछलते हुए मुनि के समीप आ गये । दो शावकों को मुनि ने अपनी बाँहों में उठा लिया और तीसरा उछल कर उसके कंधे पर बैठ गया ।

बाघों को मुनि ने समझाया, "सूर्यास्त होने तक तुम यहीं रह कर जब तब दहाड़ते रहो । कोई भी मानव इस तरफ न आये । समझसें?"

स्वीकार सूचक हलके से दहाड़ते हुए बाघ के जोड़े ने सिर हिलाये । इसके बाद शिष्यों की ओर मुड़कर मुनि ने कहा, "अब एक अच्छे से स्थान पर हमें गढ़ा खोदना है । बीच महारानी की काया पर फूल रखने के लिये युवराज को भी यहाँ लाना होगा ।"

(क्रमशः)

महा कंजूस

पुराने ज़माने में मार्का नाम का एक धनवान आदमी रहता था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। एक दिन वह शहर के किसी रास्ते से गुज़र रहा था, तब एक वृद्ध भिक्षुक ने कहा, ''बाबूजी, एक कौड़ी दान दीजिये! दो दिन से भूखा हूँ। खाने को एक कौर रोटी नहीं मिली। आप थोड़ी दया का दान कर सकते हैं''

भिखारी की पुकार अनसुनी करके मार्का आगे चल पड़ा; लेकिन उसके पीछे चले आनेवाले एक किसान ने अपनी ज़ेब से एक सिक्का निकालकर भिखारी के हाथ पर धर दिया।

मार्का ने यह देखा तब वह कुछ लज्जित सा हुआ और उसने उस गरीब किसान की ओर मुड़कर कहा, ''सुनो भाई, इस वक्त मेरे पास छुट्टे नहीं हैं। और एक सिक्का हो, तो मुझे उधार दे दो; मैं इस भिखारी को दे दूँगा! जानते हो न मुझे, कौन हूँ मैं?''

किसान ने एक और सिक्का ज़ेब से निकालकर मार्का को देते हुए पूछा, ''बताइये, आप कब मुझे सिक्का लौटायेंगे? मैं जानता हूँ आपको ज़रूर। मुझे अपना सिक्का शीघ्र ही वापस मिलना चाहिए। कब आकर मिलूँ मैं आप से?''

''कल आ जाओ। तब तुम्हारा सिक्का मैं अवश्य लौटा दूँगा। चिंता मत करना।'' मार्का ने जबाब दिया।

अगले दिन गरीब किसान मार्का के घर पहुँचा। उसको देखते ही मार्का ने कहा, ''एक सिक्के केलिए आ गये यहाँ तक? मेरे पास आज भी छुट्टे नहीं है, कल आओ न! तब तक छुट्टा पैसा मेरे पास आ जाएगा ऐसी उम्मीद है। कृपया ग़लत मत समझना।''

दूसरे दिन फ़िर बेचारा किसान मार्का के घर गया। मार्का बोला, ''बेचारा, फिर तुम

रूसी लोककथा

आ तो गये । मगर अब भी मेरे पास छुट्टे नहीं हैं । तुम एक काम करो । तुम्हारे पास निन्यानब्बे रुपये और नब्बे पैसे हों, तो दे दो, एक साथ सौ का नोट तुम ले जा सकते हो ।"

गरीब किसान ने बताया कि उसके पास इतनी रक़म कहाँ?

"तब तो दो हफ़्ते बाद मिलो ।" मार्का ने कहा ।

दो हफ़्ते बाद किसान जब मार्का के घर पहुँच रहा था, तब दूर से ही उसे देख मार्का अपनी पत्नी से बोला, "अरी सुनो तो! मैं अभी चटाई पर लेट जाता हूँ । तुम मेरे शरीर पर वस्त्र उढ़ाकर सिर के पास एक दिया रखो । वह किसान मुझसे मिलने आ रहा है । उसको मुझ से एक सिक्का लेना है । वही वसूलने के लिए आ रहा है वह! उससे कह दो, कि आज सुबह ही मैं मर गया हूँ । उससे पिण्ड छूट जाएगा मेरा!"

मार्का की पत्नी ने उसका आज्ञापालन किया । अपने पति के पास बैठकर वह फूट-फूट कर रोने लगी । किसान के पहुँचते ही रोते रोते वह बोली, "तुम्हारी ही बात कहते कहते आज सुबह ये चल बसे ।तुम्हारा सिक्का लौटाने की बात ये भूले न थे । बार बार आपको याद करते रहे ।" कहकर पत्नी फिर फूट-फूट कर रोने लगी ।

"उफ़! मेरा ऋण चुकाने से पहले ही मर गया यह दुष्ट । लेकिन अब कर ही क्या सकता हूँ? मेरा ही खर्च थोड़ा और हुआ ऐसे समझूँगा और स्वयं इसकी अन्त्येष्टिक्रिया भी

करवाऊँगा । पहले शव को नहलाना पड़ेगा न!" ऐसा कहकर किसान घर के पिछवाड़े गया । वहाँ हाँड़ी में उबलते पानी में से बालटी में भर लाया और मार्का के शरीर पर उँडेल दिया । शरीर जलने के कारण पीड़ा से मार्का के पैर हिल उठे ।

"पैर झाड़ने से क्या होगा? अब भी सही, मेरा सिक्का दोगे या नहीं?" किसान ने गुस्से में आकर पूछा । मगर फिर भी मार्का चुपचाप लेटा ही रहा ।

"शव रखने के लिये शव-पेटिका मँगवा लीजिये । मन्दिर तक ले जाकर वहाँ अभिषेक कराऊँगा और बाद में स्मशान में गाड़ दूँगा ।" किसान ने मार्का की बीवी से कहा । बीवी ने चुपचाप शव-पेटिका मँगाई । किसान मार्का को पेटी में रखवा कर

मन्दिर ले गया; संध्यासमय तक पूजा और अभिषेक करवाया । बाद में किसान वहीं रह गया ।

अर्ध रात्री के समय चार चोर मन्दिर में घुस आये । उनकी आहट पाकर किसान देवता की प्रतिमा के पीछे छिप गया । चोर कहीं से बहुत सारा धन और ज़ेवरात चुरा लाये थे । मन्दिर में बैठकर उस संपत्ति का वे आपस में बँटवारा करने लगे ।

रुपये व गहने बाँटने के बाद उन के पास सोने की मूठ वाली एक छुरी बच गयी ।

चोर फैसला नहीं कर पाये कि वह छुरी कौन रख ले और वे आपस में लड़ने लगे ।

"तुम लोग छुरी के लिये क्यों लड़ रहे हो? तुम में से जो भी पेटी में रखे शव की गर्दन काटेगा; छुरी उसीकी होगी ।" प्रतिमा के पीछे से किसान ने कहा ।

यह बात सुनकर मार्का झट उठ खड़ा हुआ और घबराकर चीख उठा, "बाप रे! मेरी गर्दन काटी जाएगी?" शव को उठ खड़े हुए देख चोर घबरा उठे और सारा धन व आभूषण वगैरह छोड़ कर अपनी जान बचाने के लिये वहाँ से बेतहाशा भाग खड़े हुए!

अब किसान प्रतिमा के पीछे से बाहर निकला "देखोजी, जो कुछ हुआ, सो हुआ । अब हमारे-तुम्हारे बीच झगड़ा क्यों? हमारी किस्मत खुल गयी और इतनी सारी संपत्ति हमारे हाथ लगी है । सब की आँख बचाकर हम न्यायपूर्वक इसे आपस में बराबर हिस्सों में बाटँ लेंगे । आओ ।" मार्का ने किसान से कहा ।

किसान ने उसकी बात मान ली । दोनों ने सपत्ति बाँट ली ।

"मेरे सिक्के का क्या?" किसान ने फिर भी पूछा ।

"चलो, अब चले चलो ।" मार्का ने कहा ।

"तुम तो देख ही रहे हो न? मेरे पास छुट्टे नहीं हैं । कल तुम ज़रूर आना ।" मार्का ने कहा ।

इसके बाद भी कई 'कल' बीत गये, मगर 'गरीब' किसान को उसका सिक्का कभी वापस नहीं मिला ।

गुप्त ख़ज़ाना

दृढव्रती विक्रमार्क उस भयानक अंधेरी रात में वृक्ष के पास आये, वृक्ष से शव उतारा और उसे कंधे पर डाल कर हमेशा की भाँति मौन हो श्मशान की ओर चलने लगे । तब शव में वास करनेवाले बेताल ने कहा – "राजन, मेरी समझ में नहीं आता कि इस भयंकर मध्य-रात्रि में कौनसा कार्य साधने के लिए आप ऐसी कड़ी मेहनत कर रहे हैं? पर आप यदि कोई गुप्त ख़ज़ाना पाने की इच्छा से यह कर रहे हैं; तो जान लीजिए कि उसके लिए इतनी कड़ी मेहनत करने की आवश्यकता ही नहीं है । क्यों कि गुप्त ख़ज़ाना प्राप्त करना कोई आसान काम थोड़े ही है? गुप्त ख़ज़ाने कुछ लोगों को आकर्षित अवश्य करते हैं, पर उनके हाथ नहीं लगते । और कुछ लोगों को बिना किसी विशेष प्रयास के अपने आप प्राप्त हो जाते हैं । इसके उदाहरण-स्वरूप श्रीकर नामक राजा की एक कहानी मैं आपको सुनाता हूँ । इसे सुन कर

बेताल कथा

HI — F-4

आप श्रम भी कुछ हद तक भूल सकते हैं। इस लिए सुनिए।

और बेताल कहानी सुनाने लगा—

एक विशाल जंगल था। वह कनकपुरी, धान्यपुरी और सप्तभूमि इन तीन राज्यों को जोड़ता था। सैंकड़ों वर्षों से वह जंगल डाकुओं के दो दलों का केन्द्र बन कर रहा था। डाकू तीनों राज्यों के गाँवों में घुस कर उन्हें लूटते और जंगल में भाग जाते। धीरे धीरे डाकुओं का दबदबा कम होता गया। जब उन दलों के नेता मर गये, तब उनके बाक़ी अनुचर साधारण जीवन बिताने की इच्छा से जहाँ-तहाँ स्थायी निवास बना कर रहने लगे। फिर तीनों राज्यों में डाकुओं का भय धीरे धीरे कम होता गया। जनता ने एक नए सुख का अनुभव किया। लोगों की धारणा भी कि भगवान ही अदृश्य रूप में उनकी मदद कर रहे हैं।

कनकपुरी का राजा श्रीकर नौजवान था, फिर भी वह बड़ी न्यायप्रियता के साथ शासन चलाता। जनता के कल्याण के लिए उसने कई कार्यक्रम आयोजित किये थे। एक बार बरसात के मौसम में सामुद्रिका नदी में भयंकर बाढ़ आई और सैकड़ों एकड़ की फ़सलें उसमें डूब गई। नदी की बाढ़ से फ़सलों को बचाने के लिए थोड़ी दूर पर एक मज़बूत बाँध बनाना ज़रूरी था। इसके लिए बहुत सारे धन की आवश्यकता थी। काम तो जनता के कल्याण का था, इस लिए राजा आदेश दे सकता था कि जनता मज़दूरी की अपेक्षा न करते हुए श्रम-दान करे। पर ऐसा करना राजा को पसंद न था। फिर केवल कनकपुरी के नागरिक ही उस काम को पूरा नहीं कर सकते थे। पड़ोसी राज्यों से मदद के लिए लोगों को बुलाना आवश्यक था। राजा श्रीकर ने सोचा—अपने राज्य के कुछ सेवाभावी लोग तो श्रम-दान करने आएँगे अवश्य। पर दूसरे राज्यों के लोग क्यों आएँगे!

राजा इस योजना के बारे में कुछ गहरा चिंतन कर ही रहा था, कि उसको समाचार मिला—धान्यपुरी राज्य का राजा शिकार खेलने जंगल गया और वहाँ साँप के काटने से उसका देहान्त हुआ। इस कारण राज्य में अब अराजकता फैल रही है।

सात दिनों के बाद उसे और एक समाचार यह भी मिला कि सप्नभूमि राज्य का राजा जंगल में शिकार खेलने गया और बाघ ने उस पर हमला किया । परिणाम-स्वरूप उसकी भी मौत हुई ।

मंत्री ने राजा को यह समाचार सुनाकर कहा–"महाराज, हमारे लिए यह अच्छा मौक़ा है । अगर हम प्रयत्न करें तो एक ही साथ इन दोनों राज्यों को हमारे राज्य में मिला सकते हैं । इन राज्यों से जो धन प्राप्त होगा, उससे हम सामुद्रिका नदी के बाँधों को मज़बूत बना सकते हैं । इस लिए उचित होगा कि हम तुरंत युद्ध की तैयारियाँ करें । किसी राज्य पर आक्रमण करना हो तो ऐसे समय करना चाहिए जब शत्रु अस्त-व्यस्त हो । राजा के अभाव में दोनों राज्य में आज बिलकुल अनुशासन नहीं है । यही वह समय है जब हम आसानी से उन पर विजय प्राप्त कर सकते हैं ।"

राजा श्रीकर को भी यह सलाह उचित लगी । लेकिन इसके लिए उनके पास आवश्यक सैनिक बल नहीं था, न सेना को बढ़ाने के लिए आवश्यक धन!

इसी समय एक ज्योतिषी राजधानी में आया जो गुप्त ख़ज़ाने का पता बता सकता था । राजा ने ज्योतिषी से परामर्श किया । ज्योतिषी ने राजा को बताया कि पासवाले जंगल के बीच एक गुफा है, जहाँ विपुल मात्रा में सोने के आभूषण संग्रहित हैं । लेकिन उस ख़ज़ाने को प्राप्त करना ख़तरे से खाली नहीं है ।

राजा श्रीकर ने समझ लिया कि इस प्रकार की गुप्त निधियों पर मानवातीत शक्तियों का पहरा रहता है और उन पर अधिकार करना उसकी ताक़त के बाहर का काम है । फिर भी हिंमत बाँध श्रीकर अकेले ही एक घोड़े पर सवार हो जंगल के बीच पहुँचा । वहाँ राजा को एक कुटिया दिखाई दी । राजा ने कुटी के अन्दर झाँक कर देखा–एक मुनि ध्यान-मग्न बैठा था । राजा ने भीतर प्रवेश किया और मुनि को भक्तिभाव से प्रणाम कर खड़ा हो गया । थोड़ी देर बाद मुनि ने अपनी आँखें खोल दीं और पूछा–"वत्स, तुम कौन हो? और क्या चाहते हो? अगर किसी मुसीबत में हो तो कहो मुझ से । मैं तुम्हारी यथासंभव

सहायता करूँगा ।"

"महात्मन्, मैं कनकपुरी का राजा श्रीकर हूँ । मुझे मालूम हुआ कि इस गुफा के अन्दर ख़ज़ाना है । उसे प्राप्त करने आया हूँ ।" राजा ने विनय के साथ उत्तर दिया ।

मुनि ने जानकारी दी—"हाँ, बात यह सच है । कुछ साल पहले डाकुओं ने इसे हमारे गुरु महामुनि को सौंप दिया था!"

"तो क्या इस समय यह ख़ज़ाना आप के संरक्षण में है?" राजा ने प्रश्न किया ।

मुनि ने कहा—"नहीं, मैं इसका संरक्षक नहीं हूँ । एक साँप और एक शेर इसके पहरेदार हैं ।"

राजा श्रीकर को याद आया कि धान्यपुरी तथा सप्तभूमि के राजा जंगल के बीच साँप के काटने व शेर के आक्रमण करने से मौत के शिकार हो गये थे । राजा ने मुनि को यह समाचार सुनाया ।

मुनि ने राजा को समझाया—"हाँ, तुम जो कह रहे हो सत्य है । धान्यपुरी का राजा कनकपुरी राज्य पर विजय पाने की अभिलाषा से इस गुफा के पास पहुँचा था । साँप ने उसे काटा और उसकी मौत हुई । राजा के अभाव में धान्यपुरी में अराजकता फैली, इसी का फायदा उठाकर सप्तभूमि के राजा ने सेना का संगठन करने के लिए धन प्राप्त करने की इच्छा से इस गुफा में प्रवेश किया था । पर शेर ने उसे मार डाला । अगर तुम्हारे मन में किसी प्रकार का भय या संकोच न हो तो यह साँप और शेर तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेंगे ।"

श्रीकर ने मुनि को प्रणाम कर कहा—"महात्मन्, मुझे किसी प्रकार का भय नहीं है!" और वह गुफ़ा की ओर आगे बढ़ा ।

राजा ने गुफा में कदम रखा, तो साँप फुफकार उठा । राजा बिना डरे कुछ क्षण वहीं खड़ा रहा, और फिर पीछे मुड़ कर अपनी राजधानी को लौट आया ।

अगले दिन श्रीकर ने धान्यपुरी और सप्तभूमि के राजपरिवारों की ओर अपने दूत भेजे । हमदर्दी बताते हुए संदेश भेजा कि इस आपत्काल में उनको जो भी सहायता चाहिए, निःसंकोच माँग लें । दोनों राज्यों की रानियों व मंत्रियों ने श्रीकर की उदारता पर प्रसन्न हो अपनी कृतज्ञता प्रकट की । साथ ही अपने

अपने देश के युवराजाओं के राज्याभिषेक में संमिलित होने के निमंत्रण भी भेजे ।

इतना सब करने के बाद राजा श्रीकर एक दिन फिर जंगल की ओर चल् पड़ा । कुटी में प्रवेश करके मुनि को नम्र प्रणाम किया और निवेदन किया—"महात्मन्, आज मैं गुफा में छिपे ख़ज़ाने पर अधिकार करने जा रहा हूँ । कृपया आप मुझे आशीर्वाद दें ।"

मुनि ने प्रसन्नतापूर्वक राजा को आशीर्वाद दिया ।

अब श्रीकर ने साहस के साथ गुफ़ा में प्रवेश किया । पहले साँप फुफकार उठा, फिर शेर गरज उठा । लेकिन दोनों ने राजा को किसी प्रकार हानि नहीं पहुँचाई । बल्कि वे प्रेम से राजा के पास आये । गुफा में अनाज के ढेर की भाँति लगे आभूषणों को राजा ने आँख भर कर देखा और उनमें से एक हाथ में उठा कर गुफा से बाहर आया । अपने सिपाहियों को कुछ सूचनाएँ दीं और राजधानी चला गया । सिपाही सारी निधि राजधानी ले गये । उस दिन से फिर कभी वह साँप और शेर किसी को दिखाई न दिये ।

इसके बाद राजा ने कुटी में रहनेवाले मुनि की अनुमति से उसके गुरु की समाधि पर एक बढ़िया मंदिर बनवाया । शेष धन राजा ने सामुद्रिका नदी पर बाँध बनवाने में लगा दिया ।

तब प्रति वर्ष उस प्रदेश में होनेवाली बाढ़ का प्रकोप नष्ट हो गया और कनकपुरी राज्य संपन्न बन गया ।

यह कहानी सुनाकर बेताल ने पूछा—"राजन्, धान्यपुरी के राजा को काटनेवाले साँप ने सप्तभूमि के राजा को भला क्यों छोड़ दिया? साँप ने छोड़ दिया तो फिर शेर ने क्यों उसे मार डाला? साँप तथा शेर ने कनकपुरी के राजा को कोई हानि नहीं पहुँचाई, क्या यह उसके क़िस्मत की बात थी? पहले तो श्रीकर गुफा में जाने से डर गया, फिर वह कैसे साहस कर पाया? मेरे इस संदेह का समाधान अगर जान कर भी आप न देंगे तो आपका सिर फट कर उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे ।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"यह गुप्त निधि विशेष महिमावाली है इस बात को हमें भूलना नहीं चाहिए । क्योंकि डाकुओं ने

अपना लूटा हुआ धन महामुनि के हाथों सौंप दिया था । यह डाकुओं के हृदय-परिवर्तन को सूचित करता है । इसके अलावा संभवतः महामुनि ने संकल्प किया हो कि उस धन का उपयोग जनता के कल्याणकारी कामों में किया जाए । एक बात और है—धान्यपुरी का राजा यह भली भाँति जानता है कि कनकपुरी का राजा श्रीकर न्यायपूर्वक शासन करता है, फिर भी धान्यपुरी के राजा ने ईर्ष्या तथा स्वार्थ से प्रेरित होकर कनकपुरी पर आक्रमण करना चाहा । इसी कारण साँप ने उसे काटा । सप्तभूमि का राजा वैसे दुष्ट नहीं है, लेकिन धान्यपुरी के राजा की मृत्यु का समाचार पाते ही स्वार्थ-बुद्धि से उसने इस मौक़े को अपने अनुकूल बनाने की कोशिश की । इसी कारण साँप ने उसे छोड़ दिया, पर शेर ने उसे मार डाला ।

अब रही बात श्रीकर की । उसने अपनी प्रजा के कल्याण के लिए नदी पर बाँध बनवाना चाहा । पर जब पड़ोसी राजाओं की मृत्यु का समाचार मिला, तब मंत्री की प्रेरणा से उन राज्यों को अपने अधीन करने की इच्छा उसके मन में पैदा हुई । पर वह खुद धर्म-बुद्धिवाला है । इससे उसके मन में यह भाव पैदा हुआ कि कहीं वह ग़लत काम नहीं कर रहा है । इसी लिए जब उसने पहली बार गुफ़ा में प्रवेश किया तब साँप के फुफकारने पर वह डर गया और उसने आगे कदम नहीं बढ़ाया । उसी समय उसने पड़ोसी राज्यों पर अधिकार जमाने की अपनी भावना छोड़ दी । और उनके प्रति मैत्री का भाव व्यक्त किया । अब उसके मन में एकमात्र इच्छा रही—जनता के कल्याण के लिए नदी पर बाँध बनवाने में यह गुप्त निधि काम लाई जाए । उसकी यह इच्छा उदात्त भाव से प्रेरित थी । इस कारण दूसरी बार जब उसने गुफा में प्रवेश किया, तब उसके मन में किसी प्रकार का भय न था । यों महामुनि का संकल्प पूर्ण हुआ, इस कारण साँप तथा शेर ने श्रीकर को नुकसान नहीं पहुँचाया!"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो वृक्ष पर जा बैठा ।

चन्दामामा पुरवणी-१४

ज्ञान का ख़ज़ाना

वह कौन है?

नगर के चौरास्ते पर, जहाँ लोगों की भारी भीड़ थी, दिन के समय, अपने हाथ में दिया पकड़े, एक तत्त्ववेत्ता राह चलनेवालों को परख परख कर देख रहा था ।

विचित्र ढंग से व्यवहार करनेवाले इस तत्त्ववेत्ता के बारे में ग्रीस देश के सभी नागरिक जानते थे । लेकिन उसकी यह चेष्टा अत्यन्त विचित्र प्रतीत हो रही थी । कुछ लोगों ने उसके समीप जाकर पूछा—"दिन के समय हाथ में दीप लिये, यह आप क्या खोज रहे हैं?"

"मैं मानव को खोज रहा हूँ ।" तत्त्वज्ञानी ने जवाब में कहा ।

"क्या कहा? आप मानव की खोज कर रहे हैं? आप के चारों ओर मानव जो विचर रहे हैं?" नागरिकों ने प्रश्न किया ।

"जो मुँह में आये उसे बकते हुए, स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण करते हुए, पैरों पर चलने-मात्र से क्या सभी लोग मानव कहलाएँगे?" तत्त्वज्ञानी ने उलटा सवाल किया ।

क्या आप जानते हैं, यह तत्त्ववेत्ता कौन हैं?

(पृष्ठ ३६ देखिये)

क्या आप जानते हैं?

१. एवरेस्ट शिखर पर आरोहण करने वाली पहली महिला गिर्यारोहक कौन है?
२. भारत के किसी भूखण्ड पर, क्या कभी जापान ने विजय प्राप्त की थी?
३. "नायलान" शब्द का निर्माण कैसे हुआ?
४. 'प्लूटो' ग्रह का कब और किसने पता लगाया?
५. समुद्र में विलीन 'लास्ट अट्लांटिस' सभ्यता का उल्लेख सर्व प्रथम किसने किया?
६. बैल का कंकाल, बकरी के बाल, घोड़ेकी पूँछ, गाय का सिर—इन सब को मिलाकर और सूअर की भाँति गुर्रानेवाला जानवर कौन है?

प्रजातन्त्र का प्राचीन केन्द्र
वैशाली नगर!
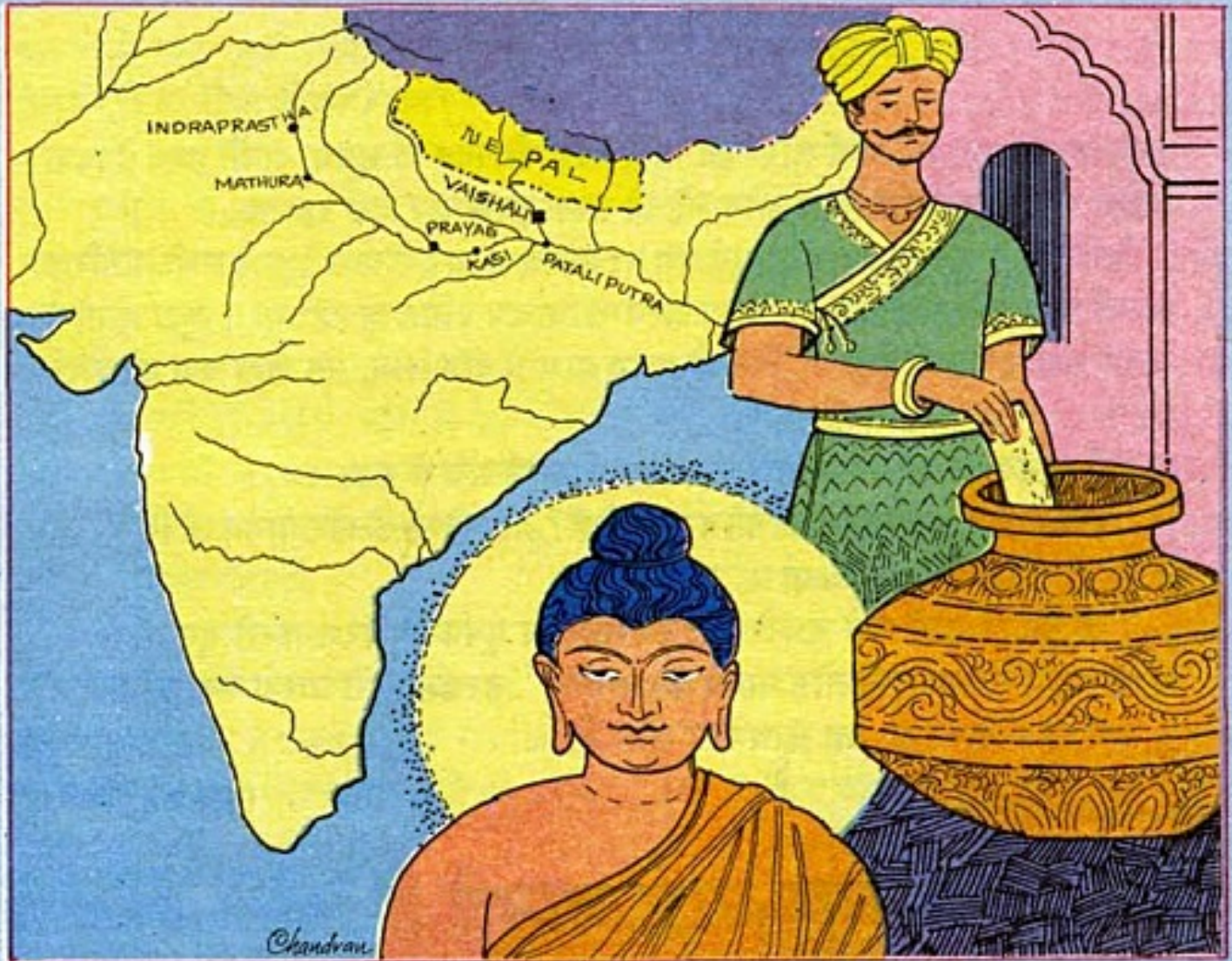
आप क्या यह समझते हैं, कि हमारे देश में प्रजातन्त्र का सूत्रपात आधुनिक काल में ही हुआ है? प्रजातन्त्रीय अधिकार हमारे ही समय में दिये गये हैं, ऐसा सोचते हैं? मगर, वास्तव में प्रजातन्त्र हमारे लिये नया नहीं है। लगभग दो हज़ार साल पूर्व भारत में कुछ प्रान्तों में प्रजातन्त्र का शासन अमल में था। इसका उत्तम उदाहरण है वैशाली नगर।

वैशाली लिच्छवियों की राजधानी रही है। इस नगर के नागरिक मतदान द्वारा ही अपने शासकों का चुनाव करते थे। लेकिन मतदान का अधिकार सब को प्राप्त नहीं हुआ करता था। समाज जिनको ज़िम्मेदार

चन्दामामा की योजना
"डाक से खिलौना"
जिनको आप गोद में लेकर सोएँगे ऐसे बढ़िया ये खिलौने चन्दामामा पेश कर रहा है–टेडी, बॉबिट, जम्बो, बाउ-बाउ और पपा-खरगोश। और एक खुश खबर है–आप अपने घर के प्रवेश-द्वार पर इनका स्वागत करेंगे। हमें पत्र लिख कर मालूम कराएँ कि कौन मेहमान आपको खास पसंद आया। एक महीने के अंदर आपका दोस्त डाकिया एक बढ़िया उपहार लिये आपका किवाड़ खटखटाएगा। सब कुछ छोड़ कर पहले आप पार्सल खोलेंगे। और यह तो खाली शुरुआत है, क्यों कि भविष्य में चन्दामामा एक से एक बढ़िया खिलौने पेश करेगा।
पाँच छोटे नटखट
मेहमान आपके घर आना चाहते हैं।

सिर्फ चन्दामामा के पाठकों के लिए विशेष प्रस्तुति ।

आप हमारे लिए वि
सब से पहले आपके
इसके अलावा एक
आपको सहूलियत

A. बॉबिट:
आकार: १३.५ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ८३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ४.८० मिलाइए ।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ८.३० मिलाइए ।

B. टेडी:
आकार: १०.५ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ९३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ५.३५ मिलाइए ।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ९.३० मिलाइए ।

C. जम्बो:
आकार: ७ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ६८.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ३.९० मिलाइए ।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ६.८० मिलाइए ।

D. बाउ वाउ:
आकार: ६ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ४५.०० -
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. २.६० मिलाइए ।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ४.५० मिलाइए ।

E. बच्चा खरगोश:
आकार: ६ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. २५.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. १.४५ मिलाइए ।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. २.५० मिलाइए ।

(खरगोश का यह सुखी परिवार पूरा करने के लिए मम्मी-खरगोश और बेबी-खरगोश के बारे में अगले अंक में पढ़िए ।)

...शेष प्रिय हैं, इस लिए यह खास योजना केवल आपके लिए । ये बढ़िया खिलौने ...पास पहुंच रहे हैं । और जैसा कि आप जान पाए होंगे, इनका दाम बहुत कम! ...र तरह से आप बचत कर सकते हैं । 'चन्दामामा' के वार्षिक चन्दे में अपने आप ...लेगी । १२ प्रतियों के लिए ५ और २४ प्रतियों के लिए १५ रु. की छूट!

प्रिय चन्दामामा

मैंने आपकी योजना "डाक से खिलौना" पढ़ी । और इन बढ़िया खिलौनों की ओर आँखें भर कर देखा । मुझे ये खिलौने भेजिए । (एक या अनेकों पर टिक लगाइए ।)

* बॉबिट * टेड्डी * जम्बो * बाउ-बाउ * पपा-खरगोश

मुझे मालूम हुआ कि 'चन्दामामा' के चन्दे में भी मुझे सहूलियत मिलेगी । नीचे लिखे अनुसार चन्दामामा का चंदा भेज रहा हूँ ।

* एक वर्ष (३६ रुपयों के ऐवज ३० रु.)
* दो वर्ष (७२ रुपयों के ऐवज ५७ रु.)
* माफ कीजिए । अभी मुझे 'चंदामामा' नहीं चाहिए ।

चन्दामामा की योजना "डाक से खिलौना"

इसके साथ चंदामामा टॉयट्रॉनिक्स प्रा.लि. के नाम रु.............. की पोस्टल ऑर्डर/मनी-ऑर्डर भेज रहा हूँ।
आशा है, एक महीने के अंदर खिलौना/खिलौने मुझे प्राप्त होंगे। अगर खिलौने मुझे पसंद नहीं आए, तो मानता हूँ, प्राप्ति के बाद
एक हफ्ते भर में मैं उन्हें वापस भेजूँ, तो मेरी भेजी रकम मुझे निश्चय वापस भेजी जाएगी।

मेरा नाम: .... जन्म-तिथि: ....

डाक का पता: ....

....

मेरी विशेष अभिरुचि : ....

मासिक पत्रिकाएँ/व्यंग-चित्र : ....

दूरदर्शन कार्यक्रम : .... खिलौने: ....

मनोरंजन के साधन : वाचन/खिलौने/खेल/दूरदर्शन/विडिओ/विडिओ गेम्स/अन्य ....

आपको सिर्फ इतना ही करना है। साथवाला कुपन भर कर उसे निम्न पते पर डाक से रवाना करें—चंदामामा टॉयट्रॉनिक्स प्रा.लि., चंदामामा बिल्डिंग्ज, १८८, एन्.एस्.के. सालै, वडपलणी, मद्रास ६०० ०२६। आपका कुपन प्राप्त होने पर एक महीने भर में आपका पसंदीदा खिलौना आपके हाथ आएगा। यह/ये खिलौना/खिलौने आपको पसंद न आएँ, तो एक हफ्ते भर में उन्हें डाक से वापस भेज दें। आपकी भेजी रकम आपको निश्चय वापस मिल जाएगी।

CUDDLES

चन्दामामा टॉयट्रॉनिक्स प्राइवेट लिमिटेड़
चन्दामामा बिल्डिंग्ज
१८८, एन्. एस्.के. सालै, वड़पलणी, मद्रास - ६०० ०२६.

Mudra:M:CT:3789

नागरिक के रूप में मान्यता देता था, उन्हीं लोगों तक मतदान का अधिकार सीमित था ।

इतिहास कहता है कि ई.पू. छठवीं सदी से लेकर ई.स. चौथी शताब्दि तक करीब एक हज़ार वर्ष तक लिच्छवियों ने ऐसी प्रजातांत्रिक व्यवस्था पर अमल किया था ।

वैशाली नगर अत्यन्त विशाल और संपन्न था । गंगा नदी के उत्तरी तट पर बिहार राज्य के ज़िला मुजफ्फरपुर के, बसर गाँव के समीप वैशाली नगर के खण्डहरों का पता लगाया गया है । कहा जाता है कि उस काल के वैशालीनगर का राज्य, वर्तमान मुज़फ्फरपुर ज़िले के क्षेत्रफल से थोड़ा बड़ा ही था । अहिंसा के अवतार गौतम बुद्ध ने इस नगर में भ्रमण कर अपने सिद्धान्तों का प्रभाव खूब जमाया था ।

चन्दामामा के सम्वाद

भूकम्प में बचा बक हेल्म

हालही में कालिफोर्निया में हुए भूकम्प में बक हेल्म नामक एक व्यक्ति कार के नीचे फँस गया । बाद में उस कार पर एक इमारत गिर पड़ी । नब्बे घंटों बाद जब मलबा हटाया गया, तब बक बेहोश अवस्था में मिल गया । तत्काल उसको बाहर खींचकर उसके प्राण बचाये गये । इतनी देर तक मलबे के नीचे जीवित बचना अनोखी बात माना जाता है । फिर भी यह घटना—पीड़ा को सहन करने की दिशा में अपूर्व मानव शक्ति को सूचित करती है ।
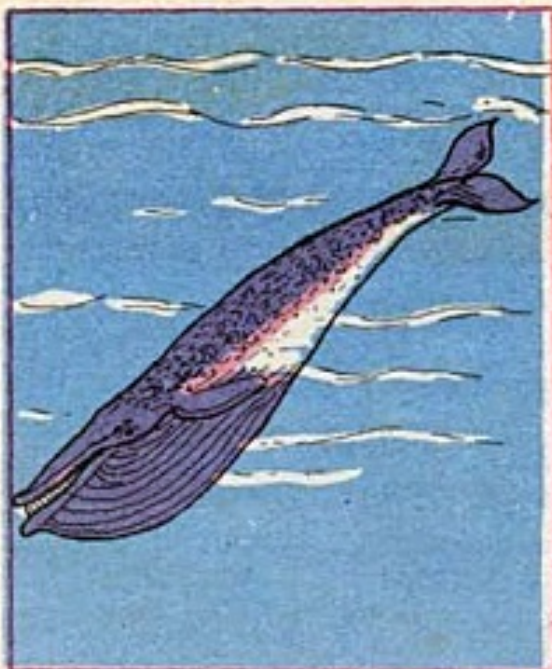
नष्ट होने की अवस्था में रहा बहुत बड़ा जानवर

ब्लू व्हेल नामक तिमिंगल ही आज विश्व-भर का सब से बड़ा जानवर है । इधर कुछ वर्ष पहले तक ऐसे जानवर संख्या में दस हज़ार तक अस्तित्व में थे, मगर अब इनकी संख्या केवल दो सौ ही रह गयी है । इंटरनेशनल व्हेलिंग कमिशन ने इसका सर्वेक्षण करके यह समाचार दिया है । कानूनन् निषिद्ध होनेपर भी कहीं कहीं तिमिंगलों का शिकार किया जाता है । इनके विनाश का एक प्रमुख कारण जलप्रदूषण भी है । मानव यदि अपने दृष्टिकोण व प्रकृति में परिवर्तन न करेगा, तो तिमिंगलों के नष्ट होने का ख़तरा बना रहेगा ।

साहित्यावलोकन

१. स्कूली शिक्षा भी पूर्ण रूप से न पानेपर भी महान लेखकों के रूप में ख्याति प्राप्त तीन व्यक्ति कौन हैं?

२. विश्वभर में सब से छोटी किताब कौनसी है?

३. अपने नाम को सात प्रकार से लिखनेवाला रचयिता कौन?

४. नोबेल पुरस्कार का वितरण किन नगरों में किया जाता है?

५. हालही में 'शीघ्र गति से लेखन करनेवाले लेखक' के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त व्यक्ति कौन है?

उत्तरावलि

वह कौन?

डायोजेनीस

सामान्य ज्ञान

१. जापान की मिसेस जुंको टबी ।

२. हाँ, द्वितीय महासंग्राम में अन्दमान द्वीपों को ।

३. 'न्यूयार्क' से 'नाय' और 'लंडन' से 'लन' को मिलाकर 'नायलान' बना ।

४. क्लैड टोंबाग, १९३० में ।

५. प्लेटो ।

६. याक् ।

साहित्य

१. चार्लस डिकन्स, मार्क ट्वेन और माक्सिम गोर्की ।

२. एलबर्ट हब्बर्ड कृत 'एसे आन सायलेन्स' नाम के अतिरिक्त पुस्तक में कुछ भी नहीं है ।

३. विल्यम शेक्सपियर ।

४. स्टाकहोम, ओस्लो ।

५. अर्ल स्टेन्ली, गार्डनर (१८८९-१९७०) एक ही समय में उन्होंने सात उपन्यास लिखे थे ।

नेहरू की कहानी - १२

जेल से छूटने के बाद जनवरी १९३४ में एक दिन दोपहर पं. जवाहरलाल अपने मकान के अहाते में किसानों के साथ बातचीत कर रहे थे । यकायक मकान के छत के खपरैल फिसल कर गिरने लगे । उस समय धीरे धीरे भूकंप शुरू हो रहा था ।

फिर भी पं. नेहरू अपने सुनिश्चित कार्यक्रम के अनुसार श्रीमती कमला के साथ कलकत्ता के लिए रवाना हो गये । उग्र दल के नेता व कार्यकर्ताओं को सबक सिखाने के बहाने सरकार ने जिस दमन-नीति का प्रयोग शुरू किया था, उसका विरोध करते हुए पंडितजी ने वहाँ पर कई सभाओं में भाषण दिये ।

चार दिन बाद पं. नेहरू पटना पहुँचे और भूकंप के तांडव को अपनी आँखों से देखा । अनेक मकान ज़मीनदोस्त हो गये थे । अनेक व्यक्ति अपने प्राणों को खो बैठे थे । जिस मकान में उनका आतिथ्य किया जानेवाला था, वह भी ध्वस्त हो चुका था । उन लोगों ने सारी रात उस मकान के अहाते में बितायी ।

फिर नेहरू पति-पत्नी इलाहाबाद पहुँचे । एक दिन पं. नेहरू और बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन बातचीत कर रहे थे, कि पुलिस वहाँ पर पहुँची । कलकत्ता में पंडितजी ने जो भाषण दिये थे, उन्हें सरकारी दृष्टि में अपराध मान कर उनको कैद किया गया । जो पुलिस अधिकारी वहाँ पहुँचे थे उनको देख पंडितजी ने कहा था–"बड़ी देर से आप ही का इंतज़ार कर रहा हूँ ।"

पं. नेहरू को कलकत्ता ले जाया गया और उन्हें अलीपुर जेल में रखा गया । जेल के संकुचित कमरे में टहलते समय पंडितजी को पिंजड़े में रखे जानवर याद आते थे ।

कार्यकर्ताओं के व्यवहार से असंतुष्ट होकर महात्मा गांधीजी ने १९३४ में असहयोग आंदोलन को स्थगित करने का आदेश दिया था । समाचार-पत्रों में यह खबर पढ़कर पंडितजी को घोर निराशा हुई ।

इस बीच कमला नेहरू बुरी तरह बीमार पड़ी । उनको देखने के लिए पंडितजी को दो बार तात्कालिक रूप में जेल से मुक्त किया गया । सरकार ने उन पर यह शर्त रखी कि अगर वे राजनैतिक कार्यकलापों से अपने को दूर रखें, तो उनको जेल से संपूर्ण मुक्ति मिल सकती है । पर कमला नेहरू ने उन्हें ऐसा करने से मना किया ।

कुछ दिनों बाद पंडितजी को अनुमति दी गई कि वे श्रीमती कमलाजी को इलाज के लिए यूरप ले जाएँ । जर्मनी में कमलाजी का देहान्त हो गया । पं. नेहरू के दिल पर यह एक बहुत बड़ा आघात था । श्रीमती कमलाजी हमेशा पंडितजी की सहचारिणी बन कर रही थी । उनका साथ पं. नेहरूजी के लिए बहुत बड़ा आधार रहा ।

थोड़े समय बाद पंडितजी की माता का भी देहान्त हो गया । वैसे उनका जन्म एक दकियानूसी परिवार में हुआ था । सिपाहियों ने उन पर जो लाठियों के प्रहार किये थे, उनसे पूर्ण रूप से वे कभी सँभल नहीं पाई ।
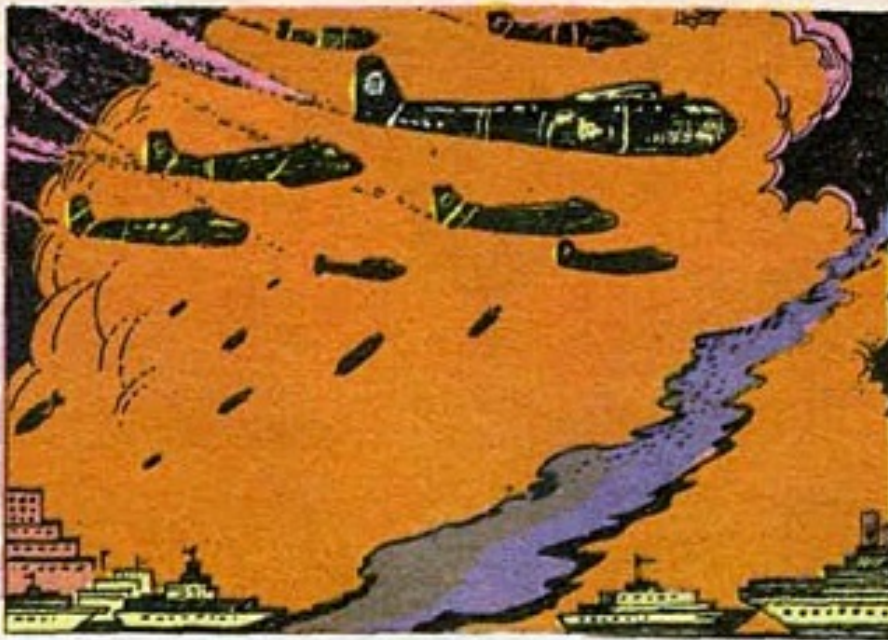
अब दूसरा महा-युद्ध शुरू हुआ। सन १९४० में जापान ने पेर्ल बन्दरगाह पर बम का प्रयोग किया। इससे युद्ध ने नया मोड़ लिया। परिणाम-स्वरूप जापान तथा अमेरिका को युद्ध में संमिलित होना पड़ा। अचानक विश्व भर में युद्ध के उद्रेक का संपूर्ण वातावरण फैल गया।

सन १९४२ में महात्मा गांधीजी ने 'भारत छोड़ो' आंदोलन का सूत्रपात किया। ब्रिटिशों को भारत छोड़ कर चले जाना है, किसी प्रकार की शर्त के बिना भारत को स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए। आधुनिक भारत के इतिहास में यह एक अपूर्व घटना थी अवश्य!

'भारत छोड़ो' आंदोलन के शुरू होते ही ब्रिटिश सरकार ने अपनी दमन-नीति और तेज़ कर दी। देश भर में हज़ारों स्वाधीनता के सेनानियों को कैद करके जेल में ठूँसा गया। पं. जवाहरलालजी को भी कैद किया गया। सर्वत्र आक्रोशपूर्ण वातावरण फैल गया।

(अगली संख्या में समाप्त)

ईमानदारी का फल

किसी ज़माने में श्रीरंगपट्टण में मोतीलाल नाम का एक जौहरी रहता था। हीरों के व्यापार में काफ़ी धन उसने कमाया था। उसका समुद्री व्यापार खूब चलता था। श्रीरंगपट्टण के व्यापारियों में मोतीलाल अव्वल नंबर का व्यापारी बन गया। सभी व्यापारी उसको बहुत मानते थे। उसने एक राजमहलनुमा अपना मकान बनवाकर उसमें बड़े ठाठ से रहने लगा।

एक दिन आन्ध्र प्रदेश से रामगुप्त नाम का एक धनी आदमी मोतीलाल के पास आया। उसने मोतीलाल के पास के सभी श्रेष्ठ रत्न देखे। उनमें से एक रत्न रामगुप्त को बहुत ही पसन्द आया। उसका मूल्य मोतीलाल ने चार हज़ार सिक्के बताया। मगर रामगुप्त के पास उस वक्त केवल तीन सिक्के ही थे। फिर भी रामगुप्त रत्न अपने हाथ से खो देना नहीं चाहता था। उसने मोतीलाल से अनुरोध किया, "मोतीलालजी, फिलहाल मेरे पास तीन हज़ार ही सिक्के हैं। आप यह रत्न मेरे हाथ सौंप दीजिये। मैं अपने घर लौट कर शेष एक हज़ार सिक्के भिजवा दूँगा। घर में राशि पड़ी है। घर जाते ही अपने नौकर के हाथ आपकी रकम ईमानदारी से भेज दूँगा। आप बिलकुल चिंता न करें।"

मोतीलाल ने भाँप लिया था, कि रामगुप्त कुलीन एवं ईमानदार आदमी है। उसने कहा, "ठीक बात है, ऐसा ही कीजिये। आप से जो कुछ वसूलना बाकी है उसे मैं आप के नाम अपने बही-खाते में लिख रखता हूँ।"

अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक रत्न लेकर रामगुप्त अपने प्रदेश लौट पड़ा। इसके थोड़े ही दिन बाद वह बीमार हो गया और उसने चारपाई पकड़ ली। खूब इलाज कराया गया, मगर कोई फ़ायदा न रहा। एक महीने तक वह चारपाई पर ही रहा और आख़िर उसकी

२५ साल पहले चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

मृत्यु हो गयी । मरने से पहले उसने अपने पुत्र पद्मनाभ को बुलाया और उसे श्रीरंगपट्टण के मोतीलाल से रत्न खरीदने की बात सुना दी । साथ ही वह कर्ज़ चुकाने की शपथ भी करवायी । उसने पुत्र को सूचित किया – "देखो बेटा, मेरी आत्मा को तभी शांति मिलसेगी जब तुम मोतीलाल का ऋण ब्याज सहित चुका दोगे । इस लिए इस ऋण का हमेशा ख्याल रखता । उसे कभी भूलना नहीं ।"

पद्मनाभ विलासपूर्ण ज़िन्दगी बिताता था, इसलिये उस के हाथ कभी पैसा बचता नहीं था । उसकी सारी संपत्ति खर्च हो गयी । परिणाम-स्वरूप बहुत कुछ प्रयत्न करने के बावजूद भी वह मोतीलाल का कर्ज़ा चुका न पाया । अंत में उसने सोचा, कि उसके पिता द्वारा खरीदे गये रत्न को बेचकर ही सही, मगर मोतीलाल का कर्ज़ ज़रूर चुकाना चाहिये । लेकिन उस मूल्यवान रत्न को ख़रीदने की हैसियतवाला कोई भी व्यक्ति पद्मनाभ को मिला नहीं ।

आख़िर वह रत्न लेकर पद्मनाभ श्रीरंगपट्टण के लिये चल पड़ा । उसका विचार था कि उस नगर में यदि रत्न बिक गया, तो बहुत ही उत्तम होगा; अन्यथा उसे मोतीलाल को ही लौटाकर, अपना कर्ज़ सूद समेत काटकर वह जो भी देगा, उसे स्वीकार कर अपने घर लौट आये । मगर पद्मनाभ जब श्रीरंगपट्टण पहुँचा तब शत्रु राजा उस नगर को घेर कर उसे लूट रहा था । पद्मनाभ वैसे भी वापस चला जाता, तो सकुशल घर पहुँच सकता था । लेकिन वह अपने निर्णय का पक्का था, इसलिये सारा नगर छानते हुए वह मोतीलाल का घर ढूँढ़ता रहा । इस प्रयत्न में ही वह शत्रु राजा के सैनिकों के हाथ लगा । उन्होंने उसे खूब पीटा और रत्न छीनकर उसे छोड़ दिया ।

इधर श्रीरंगपट्टण पर जब शत्रु का हमला हुआ, तब मोतीलाल का पुत्र अपना घरबार छोड़कर मैसूर भाग गया । शत्रु सैनिकों ने मोतीलाल का घर लूट लिया । मोतीलाल उसी चिन्ता में बीमार हुआ और मानसिक व्याधि ने उसकी जान लेकर छोड़ी । मैसूर पहुँचकर मोतीलाल के पुत्र ने अपने पिता के नाम पर इधर उधर से कुछ कर्ज़ ले लिया और अन्त में जब कहीं से भी उधार नहीं मिला,

तब भूख से तड़प-तड़प कर मर गया ।

अब मोतीलाल के परिवार में उसका पोता गोविन्द गुप्त ही बचा रहा । वह अत्यन्त बुद्धिमान था । उसे अपने दादा की संपत्ति तो नहीं मिली थी, पर पिता के द्वारा लिये गये कर्ज़ का बोझ सिर पर आ गया । उसने बड़ी मेहनत से विद्यार्जन किया । बड़े बड़े सेठ-साहूकारों के पास मुन्शी का काम करते हुए अपनी सीमा के भीतर ही कुछ छोटे मोटे क्रय-विक्रय करना आरंभ किया । इस प्रकार अपनी कमाई से ही थोड़ा थोड़ा बचाकर एक एक करके अपने पिता के कर्ज़ चुकाने लगा ।

उधर पद्मनाभ भी अधिक समय तक जीवित नहीं रहा । अपने पिता के समक्ष उसने मोतीलाल का कर्ज़ चुकाने की शपथ ली थी; मगर वह न केवल अकारण ही रत्न खो बैठा, पर खूब मार भी खायी । उस आघात से उसने भी चारपाई पकड़ ली और फिर उठने का नाम ही नहीं लिया । उसने भी अपनी मृत्यु से पहले अपने पुत्र चन्द्रशेखर को बुलाकर कहा, "बेटे, श्रीरंगपट्टण के निवासी मोतीलाल के एक हज़ार सिक्कों के कर्ज़दार बने थे तुम्हारे दादा! ऋण चुकाने के प्रयत्न में उल्टे मैं अपने सर नुकसान उठा लाया । वह कर्ज़ अब तीन हज़ार सिक्कों तक बढ़ा होगा । अब तुम कड़ी मेहनत करके धन कमाओ, और श्रीरंगपट्टण जाकर मोतीलाल का वह कर्ज़ चुकाओ । उनके बही-खाते में वह लिखा होगा । उसे मिटा न लो, तब तक मेरी व तुम्हारे दादा की आत्मा को शान्ति नहीं

मिलेगी ।"

चन्द्रशेखर ने अब कड़ी मेहनत करके धन-संग्रह करना आरंभ किया । शीघ्र ही चार हज़ार सिक्के जमा कर, उस धन के साथ वह श्रीरंगपट्टण पहुँचा । वहाँ उसे मालूम हुआ, कि मोतीलाल तथा उसके पुत्र का भी देहान्त हो चुका है और अब उनका वारिस गोविन्दगुप्त है । इसपर चन्द्रशेखर गोविन्दगुप्त के घर पहुँचा । अपना परिचय देकर चन्द्रशेखर ने उससे पूछा, "महाशय, क्या आप अपने दादा का बही-खाता मुझे दिखा सकते हैं? उसमें उधार संबन्धी एक हिसाब लिखा होगा ।"

यह बात सुनते ही गोविन्दगुप्त का दिल धड़क उठा । उसी दिन पिता के सारे ऋण कौड़ी-कौड़ी तक वह चुका पाया था । वह

इस बात पर प्रसन्न हो रहा था कि पिता के सारे कर्ज़ चुकाकर अब उसने मुक्ति पायी है। मगर चन्द्रशेखर की बात सुनकर उसे लगा कि अब दादा के कर्ज़ भी अपने सिर आनेवाले हैं।

यह विचार कर गोविन्दगुप्त कह उठा, "महाशय, अपने पिता के कर्ज़ चुकाते चुकाते मेरे बाल पक गये हैं। अब मेरे दादाजी के कर्ज़ भी चुकाने का अनुरोध करना क्या न्यायसंगत होगा? उसकी ज़िम्मेदारी मेरी नहीं है। उसकी अवधि भी कभी की समाप्त हुई होगी। अब आप कृपया मुझे क्षमा करें।"

इसपर मन्दहास करके चन्द्रशेखर ने कहा, "हमें तुम्हारे दादा से कुछ लेना नहीं है, उल्टे देना है। बहुत समय पूर्व मेरे दादा आप के दादा के एक हज़ार सिक्कों के ऋणी बन गये थे। मेरे दादा के केवल शब्दों पर विश्वास करके आप के दादा ने एक हज़ार सिक्के उन्हें उधार दिये थे। जो अपनी प्रतिष्ठा सम्हालना चाहते हैं, उनके लिये समय का कोई बन्धन नहीं होता। मैं अपने दादा का कर्ज़ ब्याज सहित चुकाने आया हूँ। कृपया आप वह बही-खाता ढूँढ लीजिये।"

चन्द्रशेखर की ईमानदारी पर गोविन्दगुप्त चकित रह गया। उसने पुराने सारे कागज़ ढूँढे; आखिर एक बही-खाते में रामगुप्त के नाम एक हज़ार सिक्कों का हिसाब लिखा हुआ मिला।

गोविन्दगुप्त ने चन्द्रशेखर से कहा, "मुझे तो आज तक इस कर्ज़ का पता ही नहीं था। आप ही ने अपनी ओर से उसका ज़िक्र किया है। मैं यह कर्ज़ नक़द रूप में आप से लेना नहीं चाहता। आप जैसे ईमानदार व्यक्ति ढूँढ़ने पर भी कहीं नहीं मिलेंगे। आज तो चार हज़ार सिक्के साथ लाये हैं, उस पूँजी से हम दोनों संयुक्त रूप में व्यापार शुरू करेंगे तो कैसे रहेगा?"

चन्द्रशेखर ने गोविन्दगुप्त की बात मान ली और दोनों मिलकर ईमानदारी से व्यापार करके शीघ्रही संपन्न बने। अच्छे मित्र बनकर दोनों ने अपना शेष जीवन बिताया।

एक दिन प्रभात-वेला में श्रीकृष्ण सात्यकी और उध्दव के साथ सभा-भवन की ओर जाने के लिए निकले। उस समय उनसे मिलने के लिए एक अतिथि आ पहुँचा। उसने द्वारपालों के साथ प्रवेश करते हुए श्रीकृष्ण से निवेदन किया-"महात्मन्, मगध देश के राजा जरासंध ने बीस हज़ार राजाओं को पराजित कर उन्हें कारागार में बन्दी बना दिया है और वह उन्हें अनेक प्रकार से त्रस्त कर रहा है। वह उन्हें लगातार कई दिन भूखा रखता है। जब कुछ खाने को देता है तो ऐसा कदान्न देता है जो शायद जानवर भी न खा सकें। फिर वह उन्हें तरह तरह की शारीरिक पीडाओं से बुरी तरह त्रस्त करता है। उनकी बड़ी दुर्दशा कर रखी है उसने! वे सभी राजा आपकी शरण में आना चाहते हैं। उन्होंने अपने प्रतिनिधि के रूप में मुझे आपकी सेवा में भेजा है। हम सब आप ही की प्रजा है, इस लिए हम सब की रक्षा करने का उत्तरदायित्व आप ही का तो है।"

इसी समय अचानक नारद वहाँ पर उपस्थित हुए। श्रीकृष्ण ने नारद का यथोचित स्वागत किया और कुशल-प्रश्न पूछे। नारद ने समाचार दिया—"ज्येष्ठ पांडव युधिष्ठिर राज्य-संपादन की इच्छा से राजसूय यज्ञ संपन्न कराना चाहते हैं। उनकी इच्छा है कि इस यज्ञ की अध्यक्षता आप करें। सभी नृपगण आपके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

एक ओर जरासंध के द्वारा बन्दी बनाये

सारे राजाओं ने अपने दूत को भेज कर श्रीकृष्ण की सहायता की याचना की है, और दूसरी ओर युधिष्ठिर द्वारा आयोजित राजसूय यज्ञ की अध्यक्षता करने का संदेश नारदजी लाये हैं ।

श्रीकृष्ण ने उद्धव से सलाह माँगी – "दोनों कार्य महत्त्वपूर्ण हैं । वास्तव में दोनों को करना चाहता हूँ । मगर एक ही समय दोनों काम नहीं किये जा सकते ।. हम किसको प्रथम संपन्न करें?"

उद्धव ने सलाह दी – "जरासंध का संहार करने के लिए कोई विशेष अवसर ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है । क्यों कि राजसूय यज्ञ संपन्न करते समय युधिष्ठिर को अनेक राजाओं को पराजित करना ही पड़ेगा । उसी समय जरासंध के मामले को निपटाया जा सकता है । मेरे विचार में इस समय राजसूय यज्ञ में संमिलित होने के लिए जाना ही अधिक उचित है । फिर युधिष्ठिर ने जिस आत्मीयता से आपको निमंत्रित किया है, उसकी अवहेलना भी नहीं करनी चाहिए । राजसूय सज्ञ में शामिल होने के लिए जाना आपका प्रथम कर्तव्य है । आप यही काम पहले अंगीकृत कीजिए । मैंने अपनी बात कही, अब आपकी जो इच्छा हो वही कीजिए ।"

इसी समय उद्धव ने एक और बात का भी स्मरण दिलाया । "सैनिक बल के प्रयोग से जरासंध पर विजय पाना सरल नहीं है । बल व पराक्रम में उसके सानी केवल भीमसेन ही हैं, जो द्वंद्व-युद्ध में उसे पराजित कर सकते है । इसके सिवा कोई और उपांय मेरी नज़र में नहीं आ रहा है । भीमसेन और जरासंध के द्वंद्व-युद्ध में आखिर भीमसेन ही जीत जाएँगे । जरासंध का सारा गर्व चूर चूर हो जाएगा ।"

उद्धव की सलाह श्रीकृष्ण को पसंद आई । उन्होंने बलराम की भी अनुमति प्राप्त कर ली, और फिर दारुक आदि को आदेश दिया कि इन्द्रप्रस्थ की यात्रा की तैयारियाँ शीघ्रतापूर्वक कर लीं जाएँ । पालकियों में रुक्मिणी, सत्यभामा आदि नारियाँ बैठ गयीं, और श्रीकृष्ण अपनी चतुरंग सेना के साथ वैभवपूर्वक निकल पड़े । नारद पहले ही प्रस्थान कर चुके थे । जरासंध के यहाँ बंदी

बने राजाओं के प्रतिनिधि से कहा—"तुम सभी राजाओं से कह दो कि वे डरे नहीं । मैं अवश्य जरासंध का संहार कर सभी राजाओं को बन्दीशाला से मुक्त कराऊँगा । अभी कुछ दिन उनकी सहन-शक्ति की परीक्षा का समय हैं । उनको धीरज खोना नहीं चाहिए । इस वक्त बड़ी शान्ति से काम लेना आवश्यक है । सभी निश्चिन्त रहें!"

श्रीकृष्ण के आगमन का समाचार सुन कर युधिष्ठिर उनके स्वागतार्थ आगे आया । आनन्दाश्रु के साथ उसने श्रीकृष्ण को आलिंगन दिया ।

श्रीकृष्ण ने पांडवों से कुशल-प्रश्न किये । फिर तोरणों, पताकाओं तथा केले के पौधों से अलंकृत मार्ग से होकर इन्द्रप्रस्थ में प्रवेश किया । श्रीकृष्ण के दर्शन करने के लिए नगर के समस्त नागरिक पुरुष तथा नारियाँ मार्ग के दोनों तरफ तथा मकानों की छतों पर जमा हो गये ।

युधिष्ठिर के भवन में श्रीकृष्ण ने कुंती तथा उसकी बहुओं के दर्शन किये ।

श्रीकृष्ण पांडवों के अत्यन्त प्रिय पात्र हैं, श्रीकृष्ण तथा अर्जुन की मित्रता लोकोत्तर है । अर्जुन ने जब खांडववन को जलाया, तब स्वयं श्रीकृष्ण उसके रथ के सारथि बने थे । उन्होंने अर्जुन को दिव्य रथ, घोड़े तथा अक्षय तूणीर दिलाये थे । मय के द्वारा मय-सभा का निर्माण कराया । अतः युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को अनेक दिन सपरिवार अपने यहाँ रखा और अंत में एक दिन भरी सभा में अपने मनोनीत

राजसूय यज्ञ के बारे में उनको परिचित कराया ।

श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर का अभिनन्दन करते हुए कहा—"आपके राजसूय यज्ञ के संकल्प का मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ । दिग्विजय करने के लिए दिक्पालों के समान आपके भाई हैं ही । वे चारों दिशाओं के राज्यों को जीत कर आपको सौंप सकते हैं । इस सदनुष्ठान में मेरे आशीर्वाद आप के साथ हैं । आपका संकल्पित यज्ञ अवश्य सफलता के साथ संपन्न होगा । किसी बात की चिन्ता मत कीजिए ।"

श्रीकृष्ण का अभिप्राय सुन कर युधिष्ठिर अत्यन्त प्रसन्न हुए । उन्होंने चारों छोटे भाइयों को चारों दिशाओं में दिग्विजय कर

राज्य जीतने के लिए भेज दिया । सहदेव दक्षिण दिशा में, नकुल पश्चिम में, अर्जुन उत्तर में और भीमसेन पूर्व में चले और उन दिशाओं के राज्यों को जीत लिया । राजसूय यज्ञ संपन्न करने के लिए आवश्यक अपार धन लाकर युधिष्ठिर को सौंप दिया ।

युद्धों में कई राजा पराजित हुए, पर जरासंध नहीं । इस पर युधिष्ठिर को चिन्ता हुई । श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के अंतःकरण की व्यथा जानकर उन्हें समझाया—"आप जरासंध के बारे में ज़रा भी चिन्ता न करें । उसको पराजित करने का उपाय उद्धव ने मुझे घर से निकलने के पहले ही बता दिया है । यह कार्य मैं संभाल लूँगा ।"

इसके बाद श्रीकृष्ण भीम तथा अर्जुन को लेकर जरासंध की राजधानी गिरिव्रजपुर में पहुँचे । इन तीनों ने वहाँ जाकर ब्राह्मणों का वेष धारण कर लिया । जरासंध प्रति दिन ब्राह्मणों की पूजा करता था । जब वह अपने इस कार्य में व्यस्त था, तब ये तीनों वहाँ पहुँचे और निवेदन किया—"हम लोग दूर देश से आए अतिथि हैं । हम आप से जो माँग लेंगे, दीजिएगा?"

जरासंध ने तीनों को बारीकी से देखा । उन तीनों की आकृतियाँ तथा कंठ-स्वर परिचित-सा लगा । उनके हाथ धनुष-बाण का प्रयोग करनेवाले राजाओं के हाथों के समान लगे । उसने पहचान लिया कि ये ब्राह्मण वेषधारी क्षत्रिय हैं ।

फिर भी जरासंध ने अतिथियों की इच्छा की पूर्ति करने का निश्चय करके पूछा—"कहिए, आप लोग मुझ से क्या चाहते हैं भला?"

"हम तुम्हारे साथ द्वन्द्वयुद्ध खेलना चाहते हैं । ये हैं भीमसेन और यह रहा इसका छोटा भाई अर्जुन! मैं हूँ तुम्हारा शत्रु कृष्ण!" श्रीकृष्ण ने उत्तर में कहा ।

ये बातें सुन कर जरासंध हँस कर बोला—"ओह, तो यह बात है! मैं द्वन्द्वयुद्ध के लिए तैयार हूँ । पर तुम से मैं युद्ध नहीं करना चाहूँगा । तुम मुझ को देख मथुरा से भाग गये, समुद्र में जाकर छिपनेवाले कायर हो तुम! मैं अर्जुन के साथ भी युद्ध नहीं करूँगा, क्यों कि वह मुझ से छोटा है । बल-पराक्रम में यह मेरी बराबरी क्या करेगा? मेरा सानी है

केवल यह भीमसेन! मैं इससे अवश्य द्वंद्व-युद्ध करूँगा ।"

यह कहकर जरासंध ने एक भारी गदा भीमसेन के हाथ में दी और एक गदा स्वयं अपने हाथ में सम्हाली । श्रीकृष्ण और अर्जुन के साथ वे दोनों नगर की सीमा पर युद्ध-भूमि में पहुँचे । वहाँ जरासंध और भीमसेन का गदा-युद्ध शुरू हुआ । दोनों मत्त हाथियों की भाँति लड़ने लगे । एक दूसरे के प्रहारों को वे बचाते रहे । कभी मौक़ा मिलने पर एक दूसरे पर प्रहार भी करते रहे । यहाँ तक कि अंत में दोनों की गदाएँ टूट गईं । तब उन्होंने मुष्टि-युद्ध करना शुरू किया ।

जरासंध का जन्म हुआ था, तब उसका शरीर दो टुकड़ों में विभाजित था । जरा नाम की एक पिशाचिनी ने उन दो टुकड़ों को जोड़ दिया था । इस कारण उसका नाम जरासंध हुआ । श्रीकृष्ण इस बात को जानते थे । उसका वध करने के लिए उसको दो टुकड़ों में काटना ही एकमात्र उपाय था । उसका वध करने के लिए श्रीकृष्ण ने एक तिनका अपने हाथ में लेकर उसे सीध में दो टुकड़ों में चीर डाला । भीमसेन यह संकेत समझ गया । उसने तुरन्त जरासंध को नीचे गिरा दिया, अपने एक पैर से उसके एक पैर को दबा कर रखा और दूसरी टाँग पकड़ कर जरासंध को सीध में चीर डाला ।

जरासंध का यह हाल देख वहाँ उस युद्ध को देखने के लिए जमा हुए लोग हाहाकार कर उठे । श्रीकृष्ण और अर्जुन ने भीमसेन को आलिंगन दिया और उसका अभिनंदन किया ।

जरासंध की मृत्यु के बाद श्रीकृष्ण ने उसके पुत्र सहदेव का मगध राज्य के राजा के रूप में अभिषेक किया और जरासंध के द्वारा कैद किये गये सारे राजाओं को कारागृह से मुक्त कर डाला ।

श्रीकृष्ण का आदेश पाकर सहदेव ने बन्दीशाला से मुक्त हुए सभी राजाओं के स्नान-पान आदि का प्रबंध किया, फिर उत्तमोत्तम उपहारों से उनका सत्कार किया । फिर उन राजाओं को अपने अपने देशों को वापस भेज दिया ।

श्रीकृष्ण भीम और अर्जुन को साथ लेकर इन्द्रप्रस्थ को लौट आये और जरासंध के वध

ऋत्विकों ने युधिष्ठिर के द्वारा यज्ञ की दीक्षा दिलवाई । राजसूय यज्ञ बड़े वैभव से संपन्न हुआ । अंत में वह दिन आया जब यज्ञ-कर्ता के द्वारा याजकों तथा अतिथियों का सत्कार आयोजित था । उस दिन युधिष्ठिर ने सभी उपस्थित लोगों को उद्धेश्य कर पूछा— "कृपया आप लोग ही मुझे सुझाएँ कि सर्वप्रथम मैं आप में से किसकी पूजा करूँ?"

पर इस प्रश्न का उत्तर कोई न दे पाया । क्यों कि सभा में एक से एक महान पुरुष उपस्थित थे । सब को मौन देखते हुए सहदेव ने कहा—"इसमें सोचने-विचारने की बात ही क्या है? भगवान श्रीकृष्ण ही सर्वप्रथम पूजा पाने के अधिकारी हैं । उनकी पूजा की गई, तो इसका अर्थ है समस्त भूतों की पूजा हो गई!"

सहदेव के इस सुझाव का सभी उपस्थितों ने स्वागत किया । युधिष्ठिर ने तत्काल श्रीकृष्ण के चरण धोये और उनको पीतांबर तथा आभूषण सौंप दिये । समस्त राजाओं ने श्रीकृष्ण को भक्तिपूर्वक प्रणाम किया ।

परंतु दमघोष के पुत्र शिशुपाल को यह पूजा बिलकुल पसन्द न आई । वह उठ खड़ा हुआ और हाथ उठाकर गरज पड़ा—"इसे काल की महिमा न कहें तो क्या कहें? सहदेव ने सर्वप्रथम पूजनीय व्यक्ति का नाम सुझाया और आप सब लोगों ने उसे स्वीकृति दी—यह कैसे मज़ाक की बात है! इस सभा में अनेक उच्च कोटि के तपस्वी विराजमान हैं, उनके होते हुए इस नीच कुल के गोपालक की

का समाचार युधिष्ठिर को सुनाया । । अपनी इच्छा की पूर्ति हो गई यह देख युधिष्ठिर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने श्रीकृष्ण को शतशः धन्यवाद दिए ।

अब युधिष्ठिर ने अपना संकल्पित राजसूय यज्ञ प्रारंभ किया । कृष्ण द्वैपायन, भरद्वाज, वसिष्ठ, विश्वाामित्र, गौतम आदि अनेक ऋषि-मुनि इस यज्ञ के ऋत्विक् बने ।

युधिष्ठिर ने यज्ञ के लिए भीष्म, धृतराष्ट्र, उनके सभी पुत्र तथा द्रोण, कृपाचार्य, विदुर इत्यादि को निमंत्रण दिया । इस यज्ञ में अनेक राजा तथा चतुर्वर्ण के विशिष्ठ लोग आ उपस्थित हुए ।

सुवर्ण-हलों से यज्ञ-भूमि को जोत कर यज्ञ-वेदी का निर्माण किया गया और फिर
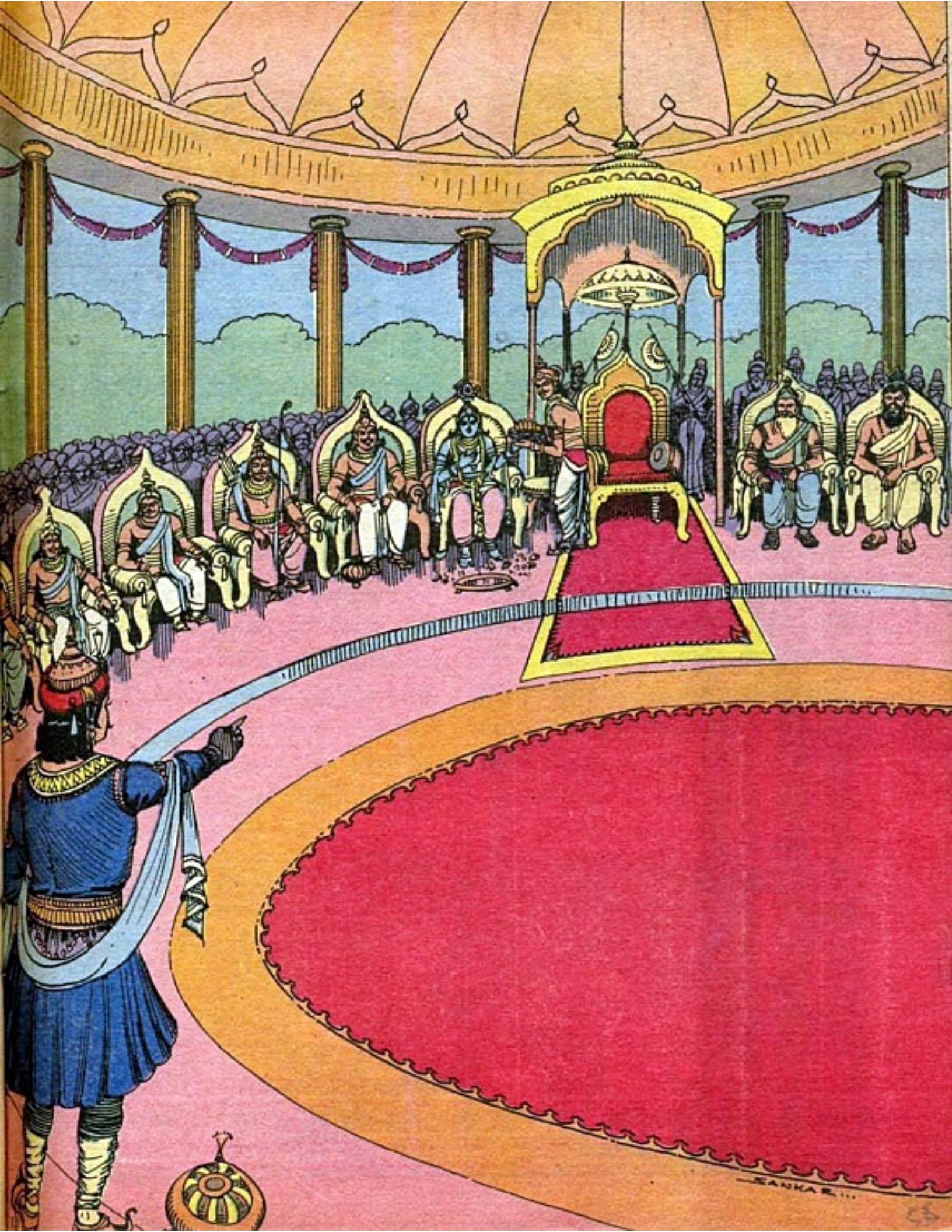
सर्वप्रथम पूजा कैसे संभव है? ययाति के द्वारा शापग्रस्त यादव पूजा के योग्य कैसे हो सकते हैं?"

शिशुपाल की बातें सुन कर श्रीकृष्ण ज़रा भी विचालित नहीं हुए, पर बाकी सदस्यों में से बहुतेरे कान बंद कर सभा-भवन छोड़ कर चले गये । कुछ लोग शिशुपाल के साथ युद्ध तक करने को तैयार हो गये । श्रीकृष्ण ने उन सब को रोका और अपने सुदर्शन चक्र का प्रयोग कर शिशुपाल का सिर काट दिया । सभा-भवन में कोलाहल मच गया । यह हंगामा देख शिशुपाल के सभी समर्थक भय के मारे भाग खड़े हुए ।

इस के बाद युधिष्ठिर ने सभी उपस्थितों को समुचित उपहार प्रदान किये । अवभृत स्नान के उपरान्त राजसूय यज्ञ सफलता-पूर्वक समाप्त हुआ ।

राजसूय यज्ञ में पधारे सभी मेहमानों के चले जाने के बाद युधिष्ठिर के अनुरोध पर श्रीकृष्ण कुछ दिनों तक इन्द्रप्रस्थ में ही रह गये ।

इस बीच दुर्योधन के मन में अतीव ईर्ष्या पैदा हुई । क्यों कि उसने युधिष्ठिर के वैभव को अपनी आँखों से देख लिया था । राजसूय यज्ञ बड़े वैभव के साथ संपन्न हुआ था । युधिष्ठिर के लिए मय ने एक अद्भुत सभा-भवन का निर्माण किया था । उस सभा-भवन में सभी राजाओं ने पांडवों के प्रति अपना स्नेह प्रकट किया था ।

उस भवन में श्रीकृष्ण की पत्नियों ने मनचाहा विहार किया । वह वहाँ भ्रम में पड़ गया, उसे पता न चला कि कहाँ पानी है और कहाँ नहीं है । जहाँ पानी न था, वहाँ दुर्योधन ने अपने वस्त्र घुटनों तक ऊपर खींच लिये । जहाँ पानी था, वहाँ पर वह इस तरह धँस गया कि उसके वस्त्र गीले हो गये । इस पर द्रौपदी के साथ सारी महिलाएँ खिलखिलाकर परिहास के साथ हँस पड़ीं । उनको यों हँसते देख युधिष्ठिर ने उनको मना किया, पर किसी ने उस ओर ध्यान न दिया । इस पर अत्यन्त अपमानित होकर दुर्योधन अपनी राजधानी हस्तिनापुर को लौटा ।

शक्ति-युक्ति

अवंती राज्य के अमरपुरी नामक गाँव में एक युवक रहा करता था, उसका नाम था शंभुमित्र । उसके मन में प्रबल इच्छा थी कि वह अपने पिता के योग्य पुत्र कहलाए । शंभुमित्र के पिता का नाम था अमरनाथ । एक साधारण नागरिक होते हुए भी उसके कार्य के कारण लोग उसकी बहुत प्रशंसा करते थे । उस समय अवंती राज्य पर एक दुष्ट राजा राज्य करता था, जिसका नाम था चक्रनेमी । जनता से प्राप्त धन को वह अपने विलासों में व्यय करता था और प्रजा की कठिनाइयों की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देता था ।

ऐसी हालत में अमरनाथ ने अपने गाँव की जनता की खूब सेवा की । कोई बीमार हुआ तो अमरनाथ उसे अपनी गाड़ी में राजधानी ले जाता और उसका इलाज करवाता । गाँव के बालक-बालिकाओं को मुफ़्त में पढ़ाता था । गाँववालों के सहयोग से गाँव की सड़कों की मरम्मत करवाता । अमरनाथ ने औषधि-विज्ञान का कुछ अध्ययन किया था । मामूली बीमारियों के लिए वह खुद ही लोगों को दवा देता । रात के समय वह गाँव के निरक्षर लोगों को बुला कर उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाता । गाँव को साफ-सुथरा रखने के लिए उसने एक सफाई-पथक चलाया था । इस प्रकार अमरनाथ ने गाँव में अपार यश प्राप्त किया ।

अमरनाथ की मृत्यु के बाद शंभुनाथ ने जनता की सेवा करके यश प्राप्त करना चाहा । लेकिन उस समय राजा चक्रनेमी का पुत्र विजयवर्मा राजा बना । पर विजयवर्मा ने अपने पिता के समान विलासमय जीवन पसंद नहीं किया । उसने जनता के कल्याण को दृष्टि में रख कर अनेक लाभदायी योजनाएँ बना कर उन पर अमल किया । इससे

अशोक सक्सेना

अमरपुरी में सब को शिक्षा तथा वैद्यकीय सुविधाएँ प्राप्त हो गईं । इस कारण शंभुमित्र को यह चिंता सताने लगी कि उसे जनता की सेवा कर यश प्राप्त करने का मौका ही नहीं रहा ।

उन्हीं दिनों दो यात्री अमरपुरी में आये । पास में कोई धर्मशाला न थी, इस लिए सोचने लगे कि अब क्या किया जाए । उनकी कठिनाई मालूम होने पर शंभुमित्र ने उस रात को उनको अपने घर में ठहराया और उनका यथोचित आतिथ्य किया । यात्री प्रसन्न हुए ।

रात के भोजन के बाद यात्रियों ने शंभुमित्र की परोपकारी वृत्तिकी प्रशंसा की और उसके बारे में अधिक जानना चाहा ।

अपना परिचय देते हुए शंभुमित्र ने कहा—"मैं अपने पिता के समान जनता की सेवा करके यश प्राप्त करना चाहता हूँ । लेकिन मुझे ऐसा मौका ही नहीं मिल पा रहा है । नये राजा के शासन में जनता को सब प्रकार की सुविधाएँ अपने आप प्राप्त हो रही हैं । यहाँ पर कोई धर्मशाला नहीं है, इस कारण आप मेरी परोपकारी वृत्ति से परिचित हो सके ।"

इस पर एक यात्री ने व्यंग्य के साथ पूछा—"राजा जनता के कल्याणकारी योजनाओं को अमल में लाता है, इससे तुम्हें दुख होता है क्या?"

शंभुमित्र ने कहा— "नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है । मुझे यही चिंता है कि मुझे जनता की सेवा करने का अवसर नहीं मिल रहा है!"

इस पर दूसरे यात्री ने हंस कर कहा—"भाई, हमारे राजा तो जनता के कल्याण के लिए विशेष योजनाएँ अमल में ला रहे हैं । आपके पिता तो महान थे । इस लिए आप लोगों की सेवा करें या न करें, जनता आपका आदर करेगी ही । पर हमारे राजा की बात ऐसी नहीं है । वे अपने पिता को प्राप्त अपयश को दूर करने की हर तरह से कोशिश कर रहे हैं!"

इस पर शंभुमित्र मौन रहा । दूसरे दिन सुबह यात्री वहाँ से चले गये ।

इस घटना के थोड़े दिन बाद शंभुमित्र ने एक दिन गरीबों को अन्नदान की योजना बनाई । उसी दिन राजधानी में राजा ने भी अपनी अन्नदान की योजना का ढिंढ़ोरा

पिटवाया ।

इस के बाद शंभुमित्र ने अपने गाँव में अपने पिता के नाम एक धर्मशाला बनाने की योजना अपने मित्रों को बता दी । पर जिन मित्रों को उसकी उच्चाकांक्षा मालूम थी, उन्होंने सलाह दी कि यह कार्य उसकी शक्ति के बाहर का है, इस लिए वह उसमें हाथ न डाले ।

शंभुमित्र ने मित्रों की सलाह की उपेक्षा कर धर्मशाला बनवाने के कार्य का श्रीगणेश किया । फिर दूसरे दिन राजधानी से राजा के कुछ प्रतिनिधी अमरपुरी पहुँचे और उन्होंने राजा की ओर से धर्मशाला बनानेकी योजना उसको बता दी ।

शंभुमित्र ने गाँव के प्रमुख व्यक्तियों को अपने मन की व्यथा बता दी—"मैं अपने पिता का नाम अमर बनाने के लिए धर्मशाला बनवाना चाहता था, लेकिन महाराजा ने इस सत्कर्म से भी मुझे वंचित किया!"

शंभुमित्र ने कुछ चिन्ता के बाद एक और योजना को निश्चित किया । उसने अमरपुरी में एक बृहत् पुस्तकालय स्थापित करने की घोषणा की, पर इस अनुष्ठान में भी विघ्न पैदा हुआ । महाराजा ने एक महीने की अवधि में अमरपुरी में एक पुस्तकालय का भी प्रबंध किया । शंभुमित्र को इस प्रकार निराश होते देख उसके मित्रों ने उसे सान्त्वना दी ।

शंभुमित्र ने हिम्मत हारे बिना कुछ और जनता के कल्याणकारी कार्यक्रमों का संकल्प किया, पर हर बार राजा उसमें दखल देता रहा और उसकी योजनाएँ रद होतीं रहीं ।

फिर छे महीनों तक शंभुमित्र ने किसी भी
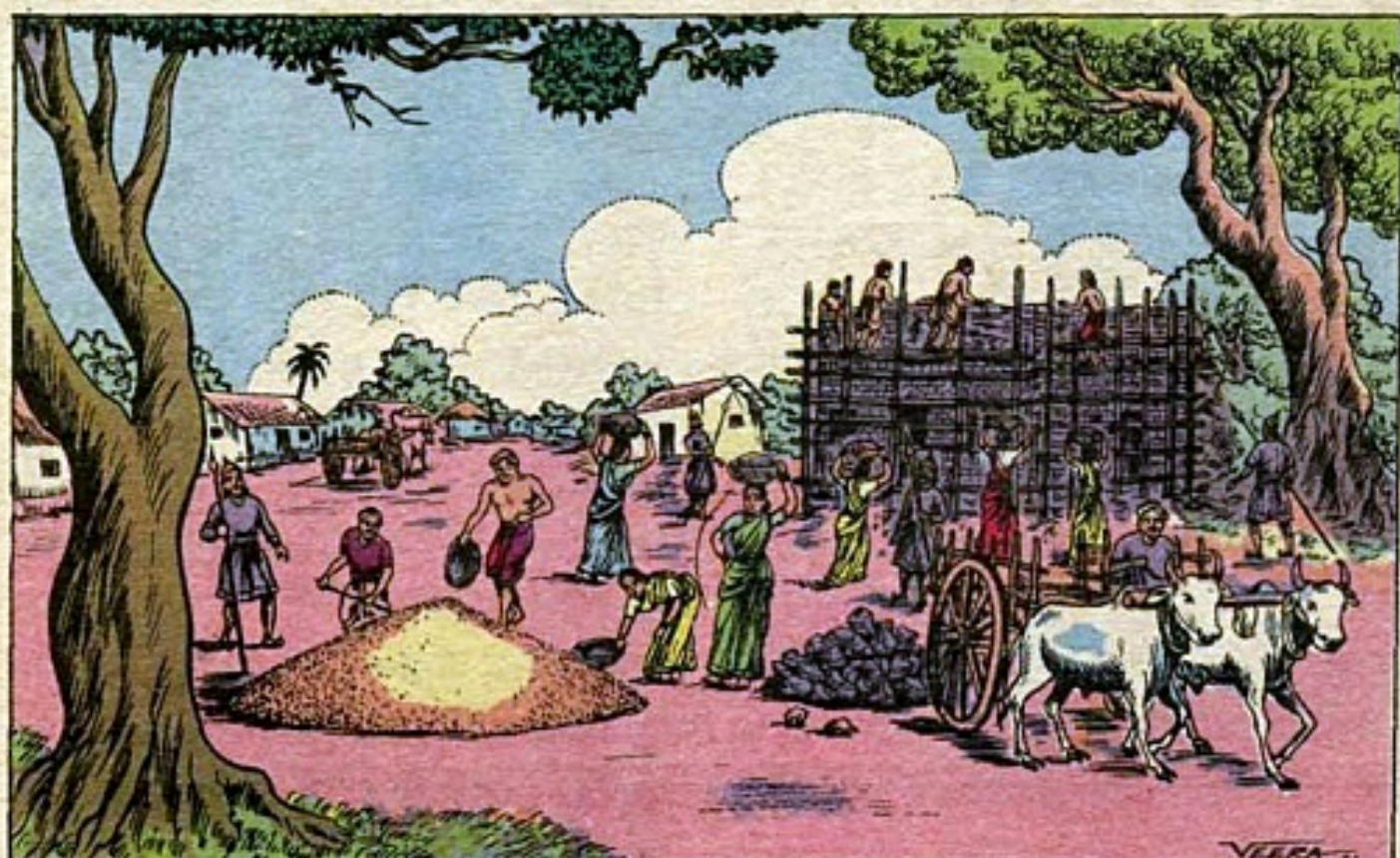
नई योजना का सूत्रपात नहीं किया । वह चुप बैठा रहा । एक दिन राजधानी से उसको निमंत्रण मिला । शंभुमित्र राजधानी जाकर राजा की सेवा में उपस्थित हुआ । उस समय मंत्री धर्मकीर्ति राजा के पास बैठा हुआ था ।

मुस्कुराते हुए मंत्री ने कहा—"शंभुमित्र, अगर आश्चर्य न करो, तो मैं तुम्हें एक समाचार देना चाहता हूँ । एक दिन यात्रियों के रूप में जो दो व्यक्ति तुम्हारे घर आये थे, वे दोनों और कोई नहीं, मैं और हमारे राजा थे । बातचीत करते हुए हमने जान लिया कि तुम्हारे मन में यश प्राप्त करने की प्रबल आकांक्षा है । अपने पिता के योग्य पुत्र कहलाने की तुम्हारी इच्छा स्वाभाविक है । लेकिन इस लिए जनता की कठिनाइयों में फँसे रहने की तुम्हारी प्रवृत्ति हमें पसंद नहीं आई । यही पाठ पढ़ाने के लिए हम कदम कदम पर तुम्हारी योजनाओं में बाधा डालते रहे कि हमारे लिए यश प्रधान हेतु नहीं है, बल्कि जनता का कल्याण ही प्रमुख है । अब बताओ, हमारे महाराजा की योजना तुम्हें कैसे लगी?"

"महाराज, मुझे क्षमा कीजिए, आप दोनों ने जब मेरा आतिथ्य स्वीकार किया था, उसी समय मैंने जान लिया था कि वे दोनों यात्री आप और महामंत्री हैं। क्यों कि आतिथ्य-स्वीकार के बाद किसी ने मेरी आलोचना नहीं की । उस दिन महाराजा की दानशीलता की प्रशंसा करके मेरी आलोचना की गई, तभी मैं वास्तविकता समझ गया था । मैं जो कार्य संपन्न करना चाहता था, उसे महाराजा कार्यान्वित कर रहे हैं इसे संयोग माननेवाला मैं कोई मूर्ख थोड़े ही हूँ?" शंभुमित्र ने विनयपूर्वक निवेदन किया ।

मंत्री धर्मकीर्ति क्रोध में आकर बोला—"इसका मतलब यह कि हमारे प्रति स्पर्धा की भावना से प्रेरित हो हर बार तुमने कोई-न-कोई नया कार्यक्रम शुरू करना चाहा! महाराजा के साथ स्पर्धा करना अविवेक ही नहीं तो क्या है?"

इस पर शंभुमित्र ने विनय के साथ कहा—"मैं आप से पुनः याचना करता हूँ कि आप लोग मुझे क्षमा करें । उसी दिन मैं समझ गया था कि हमारे यश की अपेक्षा जनता का कल्याण ही प्रमुख है । इसी विचार से मैंने एक

योजनाओं का सिलसिला बनाया । मैं ऐसे कार्यक्रमों की घोषणा करता जिन्हें वास्तव में मैं अमल में नहीं ला सकता था! महाराजा ने मेरे साथ स्पर्धा करके उन कार्यक्रमों पर अमल किया । अगर वे इन योजनाओं को हाथ में न लेते तो मैं निश्चय ही इन कार्यक्रमों से हाथ खींच लेना । मुझ जैसे एक साधारण व्यक्ति के लिए पुस्तकालय स्थापित करना, धर्मशाला का निर्णय करना कदापि संभव न था । इस समय धर्मपुरी की जनता यदि किसी प्रकार की आवश्यकता को महसूस करती है तो मेरे पास पहुँच कर बताती है—''शंभुमित्र, तुम कोई संकल्प करो, तो वह कार्य अपने आप हो जाता है ।''

यह उत्तर सुन कर राजा क्रोधित होकर बोले—''तो इसका यह मतलब है कि तुम हमारे श्रम व धन का उपयोग अपने यश के लिए कर रहे हो!''

शंभुमित्र ने जवाब दिया—''नहीं महाराज, ऐसी बात नहीं है । मैंने उन लोगों में केवल यह विश्वास मात्र पैदा कर दिया है । अगर मैं उन लोगों से यह कह देता कि मैंने राजा से निवेदन करके ये सारे कार्यक्रम संपन्न किये हैं, तो मुझे अवश्य यश प्राप्त होता । पर मैंने ऐसा कभी किसी से नहीं कहा । मैं मानता हूँ कि आपको भी ऐसा किसीने अवश्य नहीं कहा होगा । मैं जो कुछ करता रहा केवल जनता के कल्याण के लिए ही किया । उसमें कोई स्वार्थ-भाव कभी न था । आप कृपया इसे भली भाँति समझ लें ।''

इस पर राजा विनयवर्मा ने प्रसन्न होकर कहा—''शाबाश शंभुमित्र! मैंने तुम्हें ग़लत समझा । तुम सचमुच अपने पिता के योग्य पुत्र हो । तुम्हारे पिता ने अपनी शक्ति के अनुसार जनता की मदद की तो तुमने अपनी युक्ति से जनता का कल्याण किया ।''

राजा ने शंभुमित्र का यथोचित सम्मान किया और उसको एक जनता-सेवक के रूप में नाम कामने का अवसर दिया । अब शंभु-मित्र का जीवन सुख से परिपूर्ण बन गया । उसे जीवन में कोई चिंता न रही ।
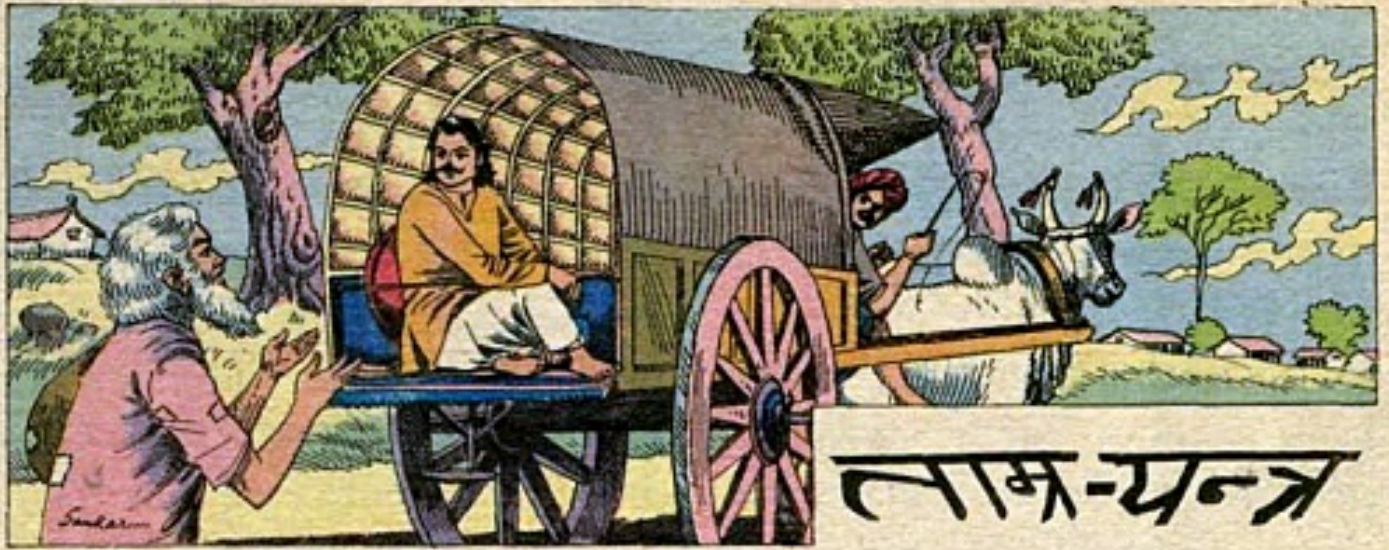
जौहरी वीरभद्र शहर में अपना काम पूरा करके बड़ी रात गये अपने गाँव लौट पड़ा । उसकी बैलगाड़ी जब शहर की सीमा पार कर रही थी, तब एक लंबी दाढ़ीवाले आदमी ने गाड़ी को रोका और पूछा, "महाशय, मैं एक घण्टे से यहाँ इन्तज़ार कर रहा हूँ, मगर किराये की कोई गाड़ी इधर से गुज़री ही नहीं । मुझे गाजीपुर जाना है, आप अपनी गाड़ी में थोडी जगह दे देंगे मुझे?"

गाडीवान ने इसपर आपत्ति उठायी, मगर वीरभद्र ने दखल देकर कहा, "अरे हमें तो गाजीपुर से होकर ही जाना है न? बैठने दो इन्हें भी हमारी गाड़ी में! एक के बदले दो बैठें तो क्या बिगड़ता है तुम्हारा? ग़रज़मन्द की मदद करना हमारा फ़र्ज़ नहीं है?"

वह आदमी गाड़ी में वीरभद्र की बगल में बैठकर बोला, "आप ने बड़ी मदद की मेरी!" फिर ज़रा रुककर वह बोला, "मेरी दाढ़ी और मैले वस्त्र देखकर कृपया अन्यथा न सोचिये, मेरा नाम रामेश है । बड़ी मुसीबतें उठाकर मैं हिमालयों में गया था, और अब अपने गाँव लौट रहा हूँ ।"

"हिमालयों से? और वहाँ जाकर क्या किया तुम ने? कोई अनूठी वस्तु प्राप्त की? या किसी महात्मा से कोई बरदान पाया?" वीरभद्र ने शंकाभरी दृष्टि से पूछा ।

इसपर रामेश ने अपनी ज़ेब से एक तांबे का यन्त्र निकालकर पूछा, "देखिये, ज़रा बताइये, यह क्या है?"

वीरभद्र ने यन्त्र लेकर उलट-पलट कर परखकर देखा और कहा, "इस ताम्रपत्र पर कुछ बीजाक्षर खुदे हुए हैं ।"

यन्त्र अपनी ज़ेब में रखते हुए रामेश ने कहा, "बीजाक्षर खुदा, यह कोई साधारण ताम्रपत्र नहीं है । हिमालयों में तपस्या करनेवाले एक योगी ने मेरी मुसीबतों पर

कुसुम मुरारका

तरस खाकर यह यन्त्र मुझे प्रदान किया है । उन्होंने बताया है कि, यदि मैं इसे अपने पूजाघर में रख दूँ, तो मेरी सारी मुसीबतें दूर हो जाएँगी । एक साल पहले मैं अपना घर छोड़ कर चला गया था, और अब मन्त्रशक्ति वाला यह यन्त्र पाकर धैर्य के साथ घर लौट रहा हूँ । अब मैं अपनी ज़िंदगी के रहे-सहे दिन कुछ सुखपूर्वक बिता सकूँगा । अब अधिक मुसीबतों का सामना नहीं करना पड़ेगा मुझे ।''

इसके बाद दोनों प्रवासी गहरी नीन्द में डूब गये ।

''महाशय, हम गाजीपुर पहुँच गये हैं ।'' गाडीवान ने चेतावनी दी और वीरभद्र एकदम जाग पड़ा । रामेश को संबोधित कर वह बोला, ''रामेशभैया, उठिये तो; हम लोग आप के गाँव पहुँच गये हैं ।''

लेकिन रामेश न हिला, न डुला! वीरभद्र ने उसको जगाने के ख़्याल से उसके शरीर पर हाथ रखा और चौंक पड़ा । क्योंकि रामेश का शरीर बर्फ़ जैसा ठंडा था! इस के बाद वीरभद्र ने उसके घर का पता लगाया और सारा समाचार उसकी पत्नी को सुनाया । वीरभद्र एक साल पहले घर छोड़ चला गया था और अब निर्जीव लौट आया है, यह देख उसकी पत्नी, पुत्र और कन्या दहाड़ें मार कर रोने लगे । उनका रोना-चिल्लाना सुन कर वीरभद्र को भी बड़ा दुख हुआ । गाड़ी में हुई बातें उसे याद आईं । चार सुख के दिनों की आशा रखनेवाला रामेश ढेर होकर पड़ा था । विधाता की लीला भी कैसी विचित्र है!
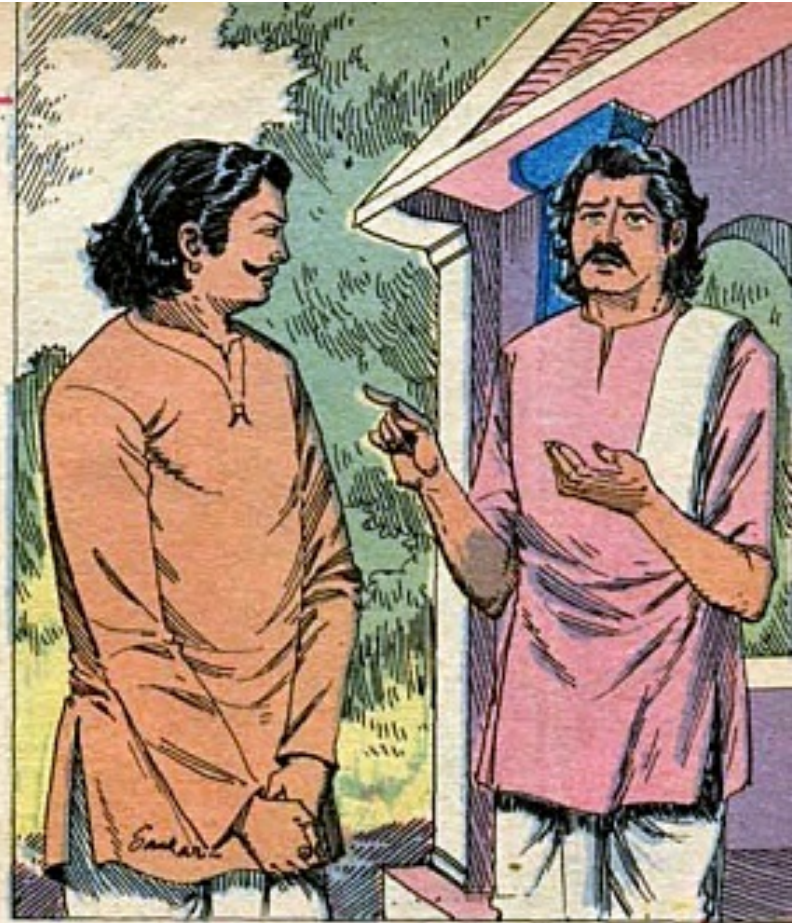
उनको सान्त्वना देकर वीरभद्र अपने घर लौटा, तब तक सबेरा हो चुका था । वह जब गाड़ी से उतरने को हुआ, तब रामेश का वह ताम्रयन्त्र वहीं पड़ा हुआ उसकी नज़र में आया । फिर मौक़ा पाकर उसे रामेश के परिवारवालों को लौटाने का निश्चय करके उसने यन्त्र को अपने पूजाघर में रख दिया ।

उस दिन रात को सोने पर वीरभद्र ठीक से सो नहीं पाया; वह बराबर दुःस्वप्न देखता रहा । स्वप्न में उसे अपना बालसखा कोदण्डपाणी दिखाई दिया । उसने पूछा, ''अरे वीरभद्र!आजकल तुम्हारे और बेटे के बीच कोई झगड़ा तो नहीं चल रहा है न?''

''तुम्हारा पुत्र गाँव के लोगों के पास जा

जाकर नौकरी दिलाने के लिये मिन्नतें जो कर रहा है? मैं तो तुम्हारी इज़्ज़त का ख़याल करते हुए, यह बात तुम्हें बता रहा हूँ।" कोदण्डपाणी ने कहा।

दोस्त के चले जाने पर वीरभद्र ने जब अपने बेटे को देखा, तब गरजकर उससे पूछा, "मैं ने सुना है, तुम गाँव के ऐरे गैरों के पास जाकर नौकरी के लिये मिन्नतें करते रहते हो, क्या सच है यह बात?"

"हाँ, हाँ! मुझे कोई न कोई नौकरी तो चाहिये न?" पुत्र ने गम्भीर होकर जवाब दिया।

अरे, तुम पर ऐसी क्या मुसीबत आ पड़ी है? हमारा व्यापार तो लाखों में चलता है! अपने व्यापार को छोड़, किसी 'ऐरे गैर नत्थू खैरे' के यहाँ नौकरी करोगे? शर्म नहीं आती तुम्हें?" वीरभद्र ने उसे फटकारते हुए कहा।

"कुछ भी हो, मुझे उससे क्या मतलब? मुझे तो नौकरी ही चाहिए नौकरी!" कहकर बेटा तेज़ी से वहाँ से चला गया।

उसी समय वीरभद्र का स्वप्न टूटा! वह चौंक कर जाग उठा, और यह सोचकर विकल होने लगा, "मैं ने कभी भी ऐसे दुःस्वप्न नहीं देखे हैं, आज ही मुझे यह क्या हो गया है?"

अगली रात भी वीरभद्र ने ऐसा ही एक बुरा सपना देखा। बात यह थी, कि असल में उसकी पत्नी स्थूल-काय औरत थी। खाना खाया तो वह हाँफने लगती, न खाया तो शिथिल हो जाती थी। उसकी जाँच करके वैद्य ने उसे सलाह दी थी कि वह दिन में एक ही जून खाना खाये और रात में केवल दूध पीकर रह जाये। इसके साथ कुछ दवाएँ भी खानी थीं उसे।

लेकिन सपने में वीरभद्र ने देखा, —उसकी पत्नी रसोई घर में दिये के सामने बैठकर चाँदी की थाली भर चावल और सब्जियाँ परोस कर ताबड़तोड़ खाये जा रही है। वीरभद्र उसको डाँट रहा है—"यह कैसा भुतहा खाना खा रही हो तुम? वैद्य ने तुम्हें क्या बताया है?"

मगर ज़रा भी विचलित हुए बिना पत्नी बोली, "दिन में केवल एक जून खाना खाकर भला कोई जीवित रह सकता है? वह तो वैद्य नहीं—यमराज का दूत है दूत! आप जाकर चुपके से सो जाइये।"

इसी बीच वीरभद्र जाग गया और सोचने लगा, "ये सब कैसे बुरे सपने हैं? कल रात बेटे की और आज रात यह पत्नी की समस्या! मैं पागल तो नहीं होता जा रहा हूँ? थोड़ा मौका पाकर अब गुरुजी के आश्रम में हो आना चाहिये मुझे ।" इस प्रकार सोचते हुए वह बाकी की रात जागता ही रहा ।

मगर दुःस्वप्नों का पिंड इससे छूटा नहीं । तीसरी रात उसके सपने में उसकी बेटी कोमली प्रत्यक्ष हुई, और लज्जा तथा ज़िद का प्रदर्शन करते हुए बोली, "पिताजी, मैं सामनेवाले मकान के युवक से शादी करना चाहती हूँ । जल्दी मुहूर्त देखिये ।"

यह सुनकर वीरभद्र को लगा, मानो उसे बिच्छू छू गया हो! उसने कड़क कर कहा, "क्या कहा? उसे घर के युवक के साथ शादी करोगी? कहीं पागल तो नहीं हो गयी हो? सारे गाँववालों को पता है, कि वह युवक किसी भयानक व्याधि का शिकार हो, कई दिन से परेशान है!"

"वह बात तो मैं भी जानती हूँ पिताजी! मगर, मुझे यदि शादी करनी है, तो उसी से करूँगी, समझे?" इतना कह कर कोमली वहाँ से चली गयी ।

सपना समाप्त होते ही वीरभद्र भय से काँपता हुआ उठ बैठा! अब तो उसे प्रतीत हुआ कि दुःस्वप्नों वाला कोई पिशाच ही मानों उसके अन्दर प्रवेश कर गया हो । अब विलम्ब नहीं करना चाहिये ।

सूर्योदय के साथ ही वीरभद्र अपने गुरु के आश्रम के लिये चल पड़ा । घर से निकलते वक्त उसको पूजाघर में रखे रामेश के
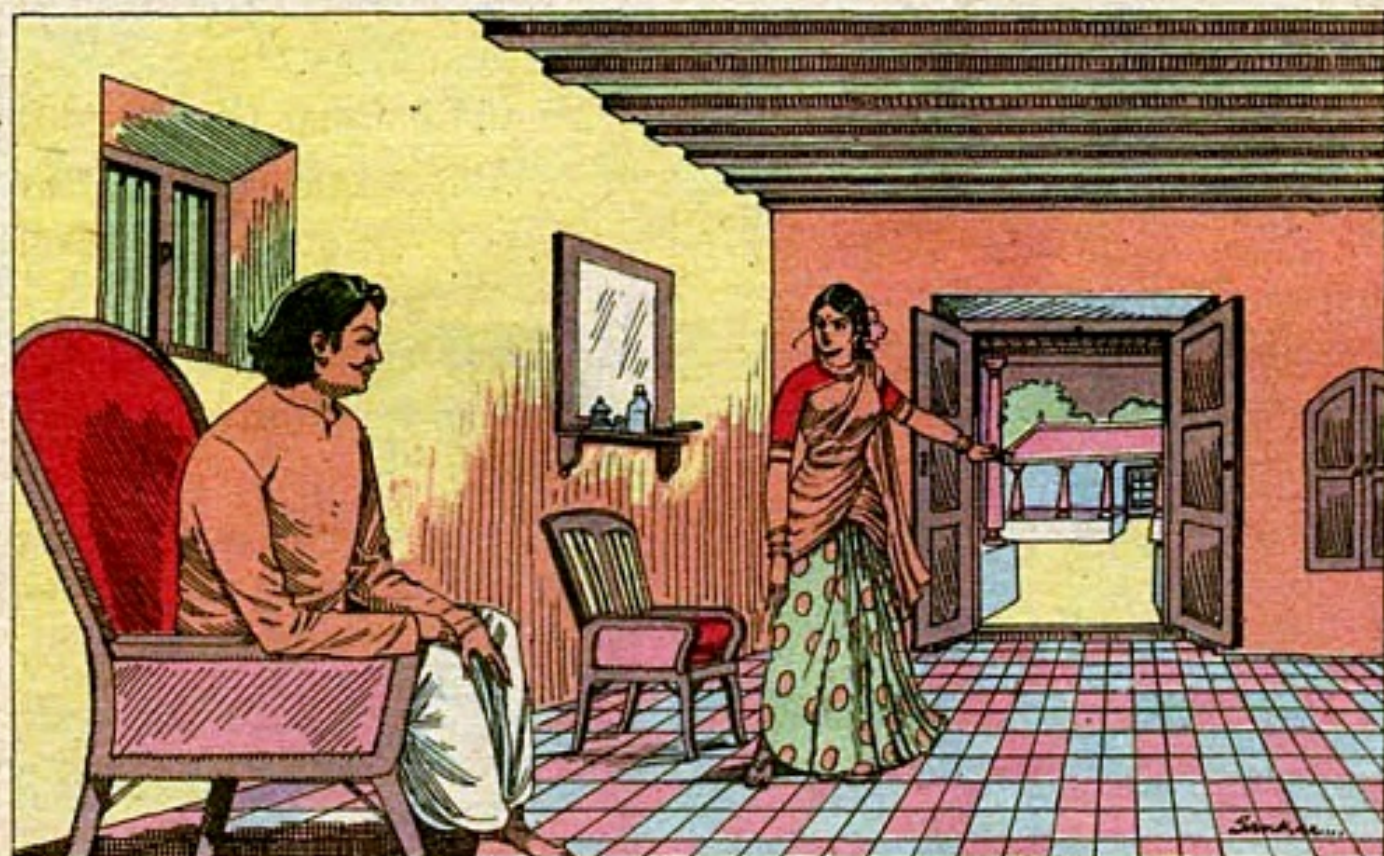
ताम्रयन्त्र की याद आयी। उसी के गाँव गाजीपुर से होकर ही वीरभद्र को गुरु के आश्रम जाना था। इसलिये वह ताम्रयन्त्र को भी अपने साथ ले गया।

गाजीपुर पहुँचकर वीरभद्र रामेश के घर पहुँचा। रामेश की पत्नी ने उसका स्वागत किया और वार्तालाप के संबंध में बताया कि उसका पति घर छोड़ कर क्यों चला गया था। उसने कहा, "हमारा बेटा पचीस साल का हो चुका है, फिर भी कहीं नौकरी वगैरह ढूँढ़े बिना सिर्फ़ आवारागर्दी करता रहता है। हमारी एक बेटी की भी समस्या है;—दहेज देकर उसकी शादी करा देने की स्थिति में नहीं हैं हम! हमारे सामनेवाले घर का युवक बिना दहेज लिये उससे शादी करने के लिये तैयार है; मगर हमारी बेटी उसे बदसूरत बताकर उससे शादी करने से इन्कार कर रही है। अब रही मेरी अपनी बात! इधर दो साल से भात देखकर जैसे मुझे कै आने लगती है। मेरे पतिको भय था कि कहीं भूख न रहने से मैं भरपेट खाना न खाऊँ तो मैं ज़्यादा दिन ज़िंदा न रह सकूँगी!—इन सारी समस्याओं के कारण डर कर वे घर छोड़ कर भाग गये थे और फिर जीवित लौट नहीं आ पाये!

रामेश की पत्नी की बातें सुननेपर वीरभद्र को अपने दु:स्वप्नों का वास्तविक कारण समझ में आ गया। रामेश की पारिवारिक समस्याओं को हल करने के लिये योगी द्वारा उसे प्राप्त बीजाक्षरों वाले ताम्रयन्त्र ने उसे अपना प्रभाव दिखाया था!

वीरभद्र ने अब रामेश की पत्नी को समझाया, "बहन, तुम चिन्ता न करो! तुम्हारा पति हिमालयों में तपस्या में रत एक योगी से एक ताम्रयन्त्र प्राप्त कर लाया था। इसके बाद बैलगाड़ी में रामेश के उस यन्त्र को खोने का समाचार सुना कर वह बोला—"बहन यह यंत्र बड़ी महत्ता रखता है। ले लो इसे और तुम्हारे पूजाघर में रखो। तुम्हारी सारी समस्याएँ हल हो जाएँगी। ताम्रयन्त्र रामेश की पत्नी को सौंपकर वीरभद्र अपने गुरु के आश्रम की ओर चल पड़ा।

मेंढ़क का अत्यन्त भयंकर जहर

दक्षिण आफ़्रिका का कोकाय नामक नामक मेंढक अपने मुंह से एक ख़तरनाक जहर को तीर की भांति छितरा देता है। एक ग्राम जहर का एक लाखवां हिस्सा भी मनुष्य का प्राण लेने में सक्षम है।

कहा जाता है कि आस्ट्रेलिया की उत्तरी सीमा पर स्थित 'एअर्स हाक' विश्वभर में सब से विशाल चट्टान है। मगर यह बात सच नहीं है। यह ख्याति पश्चिम आस्ट्रेलिया के १२३७ फुट ऊँचे माऊंट आगस्टस को प्राप्त है। बीस मील लंबा और दो मील चौड़ा यह चट्टान सुप्रसिद्ध 'एअर्स हाक' की अपेक्षा परिमाण में लगभग दुगुना विशाल है।

अति विशाल चट्टान

आफ्रिका के नर हाथी का बायाँ दांत, दायें दांत से लंबाई में थोड़ा छोटा होता है। यह हाथी अपने बायें दांत का उपयोग खुदाई के लिये करता है। इसीसे वह अधिक घिसकर दायें दांत से छोटा बन जाता है।

दाँत

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां मार्च १९९० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

M. Natarajan

S. B. Takalkar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

नवम्बर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **हैं सोच रही ये खड़ी गोपियां !**

द्वितीय फोटो : **कौन हैं इनमें कृष्ण कन्हैया !!**

प्रेषक : **संजयकुमार नन्दे,** रामगुडीपारा, रायगढ़ (म. प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिए :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA

CHANDAMAMA (Hindi) January1990 Regd. No. M. 5452